ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

गुरमति ज्ञान

(धर्म प्रचार कमेटी का मासिक पत्र)

सावन-भादों, संवत् नानकशाही ५४२

अगस्त 2010 ‍ ‍ ‍ ‍ वर्ष ३ अंक १२

संपादक
सिमरजीत सिंह
एम. ए, एम. एस. सी.

सहायक संपादक
सुरिंदर सिंह निमाणा
एम. ए (हिंदी, पंजाबी), बी. एड.

चंदा	
सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये
प्रति कापी	३ रुपये

चंदा भेजने का पता

सचिव
धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
श्री अमृतसर-१४३००६

फोन : 0183-2553956-57-58-59

एक्सटेंशन नंबर
वितरण विभाग **303**
संपादन विभाग **304**

फैक्स : 0183-2553919

e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com
website : www.sgpc.net

विषय-सूची

गुरबाणी विचार

सो जीविआ जिसु मनि वसिआ सोइ ॥
नानक अवरु न जीवै कोइ ॥
जे जीवै पति लथी जाइ ॥
सभु हरामु जेता किछु खाइ ॥
राजि रंगु मालि रंगु ॥
रंगि रता नचै नंगु ॥
नानक ठगिआ मुठा जाइ ॥
विणु नावै पति गइआ गवाइ ॥१॥ *(पन्ना १४२)*

पहले पातशाह श्री गुरु नानक देव जी महाराज माझ की वार में अंकित इस पावन सलोक द्वारा प्रभु-नाम को भुला कर परतंत्र प्रकार से तुच्छ जीवन-ढंग को नकारते हुए मनुष्य-मात्र को पदार्थवाद, लोभ-लालच और राजनैतिक वैभव भरे अन्याय भरपूर व्यवहार से सुचेत करते हुए आत्म-सम्मान भरी जीवन-विधि अपनाने के लिए प्रेरित करते हैं।

सतिगुरु जी कथन करते हैं कि वह मनुष्य जीता है अथवा जीवित कहलाने का अधिकारी है जिसके मन में वो मालिक सर्वशक्तिमान परमात्मा बसा है। गुरु जी कहते हैं कि इस कसौटी पर पूरा न उतरने वाला अन्य कोई जीता ही नहीं है। यदि सम्मान न रहने पर कोई जीवनयापन करता है तो वह जो भी खाता है सब व्यर्थ अथवा इससे भी आगे हराम होता है। कहने से भाव आत्म-सम्मान गंवा कर यदि कोई पदार्थक तथा मायावी रूप से सम्पन्न भी हो जाए तो उसका वास्तविक ठोस लाभ नहीं होता।

गुरु जी फरमान करते हैं कि जिस मनुष्य का राज्य वैभव में मन होता है, जो धन-सम्पदा के मोह में है वह इस अनचाहे रंग-रस में लज्जाहीन होकर नाचता है अथवा राज्य-वैभव, धन-माल की प्रवृत्ति भी आत्म-सम्मान को खत्म करने वाली है। अंत में सतिगुरु जी कहते हैं कि जो प्रभु-नाम से विहीन रहता है वह वस्तुत: लूट जाता है और उसने मनुष्य-जन्म पाकर भी अपने सम्मान को खो दिया है।

सिक्ख स्वतंत्रता का प्रतीक गुरु के बाग का मोर्चा

स्वतंत्रता हरेक मनुष्य की अति स्वाभाविक इच्छा है जो उस सृजनहार ने स्वयं प्रत्येक मनुष्य-मात्र के हृदय में विद्यमान कर रखी है। इससे भी एक कदम आगे बढ़ते हुए यह कथन भी पूर्णतः सत्य है कि स्वतंत्रता प्रत्येक मनुष्य-मात्र का जन्म-सिद्ध अधिकार है। दूसरी ओर यह सच भी लगभग सभी विचारकों द्वारा मान्यता प्राप्त है कि मनुष्य जन्म तो स्वतंत्र रूप में लेता है लेकिन वह आयु-पर्यंत बहुप्रकारी जंजीरों की कैद में ही रहता है। परतंत्रता एक अभिषाप है। परतंत्रता से स्वतंत्रता की ओर गतिशीलता दर्शाना जांनिसार तथा साहसी मनुष्यों और कौमों के हिस्से आया है। एक जांनिसार तथा साहसी कौम होने के कारण सिक्ख पंथ प्रारंभ से ही परतंत्रता को रद्द करता तथा स्वतंत्रता की ओर कदम बढ़ाता समस्त संसार के सामने दृश्टव्य होता है। सिक्ख पंथ का तो जन्म अथवा उदय ही परतंत्रता से स्वतंत्रता की ओर समस्त देश तथा इससे भी आगे सारी मानवता की संपूर्ण स्वतंत्रता के लिए हुआ है। यह ऐतिहासिक सच्चाई है कि गुरु नानक नाम-लेवा सिक्ख जहां अपने स्वतंत्र अस्तित्व के लिए संघर्षशील रहे हैं वहां वे देश के दबे-कुचले जनसाधारण के छुटकारे के लिए भी पूर्णतः प्रयासरत रहे हैं। इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु उन्हें प्रत्येक युग में तत्कालीन राजनैतिक प्रबंध के विरुद्ध मोर्चे लगाने पड़े हैं। कुछ मोर्चे अत्यधिक लंबे भी होते रहे हैं परंतु गुरु के नाम-लेवा साहसी सिक्खों अथवा सिंघों-सिंघनियों ने कभी साहस नहीं छोड़ा। ऐसे प्रसंग में उनकी कुर्बानियां बढ़ जाती रही हैं और अंत में विजय भी उन्हीं को ही नसीब होती रही है। यह ऐतिहासिक सच गुरु के बाग के मोर्चे का इतिहास उजागर करता दीखता है।

बरतानवी साम्राज्य ने समस्त भारत में लगभग दो सौ वर्ष तक शासन किया जबकि पंजाब में गुरु के सिंघों के अस्तित्व के कारण इसको वह मात्र एक सदी के लिए ही परतंत्र रख सका, हालांकि यह समय भी अपने आप में कोई लघु रूप वाला नहीं। परतंत्रता का तो एक पल भी दुखदायक होता है।

बीसवीं सदी में बरतानवी साम्राज्यवादियों ने सिक्ख पंथ के धार्मिक मामलों और यहां तक कि इसके धार्मिक स्थानों में हस्तक्षेप की बुरी रीति अपनाई तो सिक्ख पंथ को इसके विरुद्ध जोरदार संघर्ष करने के लिए विवश होना पड़ा।

'गुरु का बाग' सिक्खों का एक पावन धर्म-स्थान अर्थात् गुरुद्वारा साहिब है। यह पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी और नवम गुरु श्री गुरु तेग बहादर साहिब का यादगारी पावन स्थल है। यह जिला अमृतसर की तहसील अजनाला में स्थित है।

जैसे बरतानवी साम्राज्य की पुश्तपनाही के कारण गुरुद्वारा श्री ननकाणा साहिब में महंत नरैणू अनचाही बदतर स्थिति के लिए जिम्मेवार था वैसे ही गुरुद्वारा गुरु के बाग का महंत सुंदर दास भी पवित्र स्थान को अपनी नापाक क्रियाओं से दूषित करता आ रहा था। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी को इसके विरुद्ध कई शिकायतें मिलीं तो इसने जिला कमेटी के मुखिया को महंत सुंदर दास को समझाने तथा मार्ग पर लाने का कार्यभार सौंपा। ३१ जनवरी, १९२१ को गुरु के बाग में एक विशाल एकत्रता हुई। इस विशाल पंथक एकत्रता में महंत ने आगे से दुराचारी प्रवृत्ति छोड़ने, एक स्त्री के साथ शादी कराने, अमृत छकने और सिंघ सजने का लिखित रूप में प्रण किया और कुछ समय एक सिक्ख के रूप में जीवन-यापन भी करके दिखाया, परंतु ननकाणा साहिब के साके के घटित होने के उपरांत जब अंग्रेज सरकार अकालियों पर सख्ती बरताने पर उतर आई तो महंत सुंदर दास की दबी बुराइयां फिर पनपने लगीं। महंत जब पवित्र स्थान को अपनी अनैतिक क्रियाओं से पुन: दूषित करने लगा तो शिरोमणि कमेटी ने २३ अगस्त, १९२१ को इस गुरुद्वारा साहिब को अपने प्रबंध में ले लिया। महंत ने सरकार से सहायता मांगी। पुलिस मौका देखने आई परंतु पुलिस कप्तान ने स्थिति देखते हुए अकाली दल के कब्जे का समर्थन किया। अकाली प्रबंधकों को सुरक्षा तक भी दी। महंत पुन: झुक गया और अमृतसर में रहने लगा। जब ८ अगस्त, १९२२ को गुरुद्वारा साहिब की ही भूमि से गुरु के लंगर के लिए लकड़ियां काटने गये पांच सिक्ख ९ अगस्त को गिरफ्तार किये तो सिक्ख पंथ को सरकार के विरुद्ध गुरु के बाग का मोर्चा लगाना पड़ा। चूंकि गुरुद्वारा साहिब की भूमि से लंगर के लिए लकड़ियां काटना अवैध न था इसलिए यह मोर्चा सरकार के अन्याय के विरुद्ध सिक्खों की हक-सच की जद्दोजहद थी। सिक्ख लकड़ियां लेने जाते रहे, पुलिस द्वारा मार-पीट सहन् करते रहे और गिरफ्तार होते रहे। २६ अगस्त को गुरुद्वारा साहिब में एकत्रित सिक्खों पर लाठीचार्ज किया गया। २६ अगस्त, १९२२ की श्री अकाल तख्त साहिब पर ९ पंथ नेताओं की गिरफ्तारी भी इसी मोर्चे का हिस्सा बनी। २९ अगस्त को ६० सिंघों के जत्थे को श्री अकाल तख्त साहिब से गुरु के बाग के लिए रवाना किया गया तो गुरु के बाग के नजदीक पहुंचे इस जत्थे को पुलिस द्वारा अत्यंत कठोरता से पीटा गया परंतु जत्थे ने शांतमयी रहने का अपना प्रण पूर्णत: निभाया। फिर १००-१०० सत्याग्रही सिंघों के शांतमयी जत्थे नित्य-प्रतिदिन रवाना होने लगे और समस्त पंजाब के सिक्खों ने इसमें अपना योग डाला। अंत को सिंघों की दृढ़ता तथा धैर्य के आगे सरकार को झुकना पड़ा और मोर्चा फतह हुआ।

यह मोर्चा गुरु नानक नाम-लेवा सिंघों के साहस का एक ऐतिहासिक प्रमाण है जो हमें आज भी तथाकथित लोकतांत्रिक प्रबंध में सिक्ख पंथ के साथ किये जा रहे अन्याय के विरुद्ध साहस एवं धैर्य के साथ संघर्ष जारी रखने के लिए प्रेरित करता है। ऐसा अद्वितीय इतिहास हमें सदैव स्मरण रखना होगा तभी हम अपनी वर्तमान कठिनाइयों में से निकलने में सक्षम हो पायेंगे।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब और समाज

-डॉ. सुरैण सिंघ (गुरपुरवासी)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब एक अद्वितीय धर्म-ग्रंथ हैं और इसके श्रद्धालुओं द्वारा इसका पठन, पाठन, मनन तथा परिशालीन मुख्यतया धार्मिक दृष्टिकोण से ही किया गया है। इसमें संदेह नहीं कि धार्मिकता श्री गुरु ग्रंथ साहिब का महत्वपूर्ण विषय है, परन्तु इसका गुरु-रूप में प्रतिष्ठापन, केवल इसके सम्मुख श्रद्धापूर्ण नत्मस्तक होने के लिये ही नहीं हुआ था, बल्कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब यथार्थ रूप में गुरु-रूप हैं जिसमें जीवन के समस्त पहलुओं की ऐसी विवेचना है कि यह महान ग्रंथ किसी विशेष सांप्रदायिकता की ओर न ले जाकर समुचित, सुव्यवस्थित एवं सम्मानपूर्ण जीवन-यापन करने के लिये मानव का सही पथ-प्रदर्शन करता है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में पंजाब से बाहर के संतों की बाणी भी संग्रहीत है। इस बाणी को एकत्रित करने वाले श्री गुरु नानक देव जी थे। श्री गुरु नानक देव जी ने पंजाब में जन्म लिया, परन्तु उन्होंने जो प्रचार-यात्राएं कीं, इनसे स्पष्ट है कि उनका कार्य-क्षेत्र केवल पंजाब तक ही सीमित नहीं था। वे मात्र किसी धार्मिक मिशनरी के रूप में पंजाब से बाहर नहीं निकले थे। उन्होंने तत्कालीन मानव की सामाजिक अवस्था, जो मानवोचित जीवन-मूल्यों का परित्याग कर जर्जरित, रोगी एवं ह्रासोन्मुख थी, की नाड़ी को एक योग्य एवं मंगलमय सुखदाता-वैद्य की भांति पहचाना और उसके उपचार हित घर से निकल पड़े।

पहली उदासी में उन्होंने ऐसे स्थानों की यात्रा की जहां से उन्होंने भक्त साहिबान की बाणी को इकट्ठा किया। प्रो. सतबीर सिंघ लिखते हैं कि गोरखमता (अब नानकमता), बनारस, पटना, गया, बंगाल, जगन्नाथ, पंढरपुर (सितारा), राजस्थान, मथुरा-वृंदावन, कुरुक्षेत्र आदि स्थानों की यात्रा उन्होंने इसी उदासी में की। इसी उदासी में वे ऐमनाबाद भाई लालो और मलिक भागो से मिले, हरिद्वार गए, गोरख-पंथी योगियों से मिले तथा भक्त कबीर जी और भक्त रविदास जी से भेंट की, भक्त जैदेव जी और भक्त नामदेव जी के स्थानों पर जाकर उनकी बाणी प्राप्त की, जैन मुनियों, वैष्णवों, शाक्तों आदि से मिले, भक्त धंना जी से भेंट हुई। इस यात्रा ने गुरु जी को समुचित सामग्री प्रस्तुत की जिस सामग्री में उनके पूर्ववर्ती तथा समसामयिकों की बाणी भी थी, जिनसे वे प्रभावित हुए।

गुरु जी की यात्रा के विषय में सिद्धों से हुई वार्तालाप में भाई गुरदास जी ने उनकी उदासियों का उद्देश्य वर्णन किया है। जब सिद्धों ने श्री गुरु नानक देव जी से पूछा कि संसार की स्थिति कैसी है और आप क्यों भ्रमण कर रहे हो, तो गुरु जी कहते हैं :

बाबे आखिआ, नाथ जी! सचु चंद्रमा कूड़ु अंधारा।
कूड़ु अमावसि वरतिआ हउ भालणि चढ़िआ संसारा। *(वार १:२९)*

गुरु नानक साहिब ने जिस सत्य की खोज की, उसके प्रतिपादकों की बाणी, अपनी बाणी के समेत उन्होंने अपने अनुयाइओं के लिये सुरक्षित

छोड़ी, जिनसे १६०४ ई. में श्री गुरु अरजन देव जी ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब के प्रथम पावन स्वरूप का संपादन किया।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी लोक-संघर्ष के हितों एवं महत्वाकांक्षाओं को प्रत्यक्ष करती है। इसमें सामंतवादी-लोक-दुश्मन-श्रेणियों की जीवन-व्यवस्था तथा उनकी सहायक श्रेणीगत विचारधारा की बुराइयों का विशेष रूप से अनावरण किया गया है। इस विचारधारा के मानव-विरोधी अंगों पर कारगर चोटें की गई हैं। इसी लोक-संघर्ष की विवेचना में जीवन के प्रत्येक पहलू पर इस पावन ग्रंथ में प्रकाश डाला गया है। इसी कारण इस पावन ग्रंथ के सामाजिक तत्व के क्षेत्र की सीमा बड़ी विशाल है। संघर्ष की विवेचना के स्पष्टीकरण के लिए हम सामाजिक जीवन के इस पावन ग्रंथ में वर्णित तत्वों को निम्नांकित रूपों में विभक्त करते हैं :

१. राजनीतिक स्थिति : विदेशी आक्रमण, आक्रमणकारियों की बर्बरता, अत्याचार, अन्याय तथा इस पावन ग्रंथ की प्रतिक्रिया।
२. धार्मिक स्थिति : सांप्रदायिक स्थिति, वर्ण व्यवस्था, घृणा, अंधविश्वास और श्री गुरु ग्रंथ साहिब का धर्म।
३. पारिवारिक व्यवस्था : जीवन के मुख्य संस्कार, गृहस्थ जीवन, पति-पत्नी संबंध, रीति-रिवाज और श्री गुरु ग्रंथ साहिब में पारिवारिक व्यवस्था का रूप।
४. नैतिक स्थिति : नैतिक पतन, सत्य का अभाव, झूठ का बोलबाला, अन्याय, रिश्वतखोरी, चोरी-यारी, व्यभिचार, कृतघ्नता और इस पावन ग्रंथ का नैतिक संदेश।
५. आर्थिक व्यवस्था : वर्ग-समाज, धनी-निर्धन श्रेणियां, निर्धन का शोषण और इस पावन ग्रंथ में श्रमिक तथा निर्धन श्रेणी की वकालत, श्रम का समादर अथवा सम्मान।
६. व्यवहारिक स्थिति : हिंदू-मुसलमानों का नित्य-प्रति का जीवन, दो संस्कृतियों का संगम, आदान-प्रदान, वर्णाश्रम पर आधारित जीवन, लोगों के व्यवसाय, मनोरंजन के साधन, खेल-तमाशे, खानपान, त्योहार और जीवन का इस पावन ग्रंथ द्वारा प्रतिपादित चित्र।
७. सांस्कृतिक स्थिति : परंपरागत सांस्कृतिक विश्वासों तथा रूढ़ियों का इस पावन ग्रंथ में विवरण, उनका विश्लेषण तथा इस पावन ग्रंथ में उनका स्वरूप।
८. ऐतिहासिक विवरण : पौराणिक विवरण-सम-सामयिक इतिहास।
९. सुधार अथवा क्रांति संदेश : मानव-समाज की नींव, जातिगत अभिमान का विरोध, व्यक्तिगत कर्त्तव्यों की व्याख्या, गुरुता-लघुता की कसौटी-व्यवहारिक जीवन।
१०. भूगोलिक विवरण : धरती, आकाश, खगोल, अंतरिक्ष, सूर्य, चंद्रमा, अग्नि, वायु आदि की स्थिति।
११. कलात्मक स्थिति : भिन्न-भिन्न कलाओं के प्रति लोगों का अनुराग, कविता, नृत्य, संगीत, चित्रकारी, वस्तु-कला, कसीदाकारी, व्याकरण-शास्त्र ज्ञान का अनुराग और इस पावन ग्रंथ का इनके प्रति मत।

कहना उचित होगा कि उपर्युक्त विवरण के आधार पर इस पावन ग्रंथ की सामाजिक स्थिति के विषय में स्वतंत्र रूप से विचार-विमर्श प्रस्तुत किया जा सकता है, किन्तु यहां हम अपने प्रबंध की सीमा के अनुकूल समाज के इन मूलभूत तत्वों का इस ग्रंथ में जो विवेचन है, उसे प्रस्तुत करने का प्रयत्न करेंगे।

१. राजनीतिक स्थिति

श्री गुरु ग्रंथ का संपादन १६०४ ई में हुआ। इसके संपादन के लिये श्री गुरु नानक देव जी ने बाणी एकत्र करनी शुरू कर दी थी। भक्त नामदेव जी, भक्त कबीर जी, भक्त सधना जी आदि भक्त साहिबान को समकालीन शासकों द्वारा यातनाएं दी गईं। उनकी बाणी से उस समय के किसी जाति विशेष पर किए जाने वाले अत्याचारों का पता चलता है। "मध्य देश में कट्टरवादियों की तलवार का पानी राज्यों के अनेक सिंहासनों को डुबो चुका था। खिलजी वंश के अलाउद्दीन ने समस्त उत्तरी भारत को अपने आधिपत्य में ले लिया था। दक्षिण भारत भी उनके आक्रमण से नहीं बच सका था। जिन हिंदू राजाओं में आत्मसम्मान और शक्ति की मात्रा शेष थी, वे उसकी रक्षा का अनवरत परिश्रम कर रहे थे। ऐसे अनिश्चित काल में हिंदू जनता के हृदय में जिस भय और आतंक को स्थान मिल रहा था वह उनके धर्म को जर्जरित कर रहा था। धर्म-रक्षा की शक्ति हिंदुओं के पास रह ही नहीं गई थी।"[१]

बाबर का आक्रमण : "उत्तरी भारत में अभी स्वदेशी शासकों का शासन पूर्ण रूप से लुप्त नहीं हो पाया था। राणा संग्राम सिंह ने एक बार फिर भारत में हिंदू शासन स्थापित करने के लिये लगभग संपूर्ण राजपूतों का संगठन कर, लोदी वंश की डावांडोल स्थिति में दिल्ली पर अधिकार कर मुगलों की राजनैतिक सत्ता को समाप्त करने का प्रयत्न किया, परन्तु आगरा के निकट बाबर और राणा संग्राम सिंह के युद्ध में राणा की पराजय हुई और देश की राजनैतिक सत्ता मुगलों के हाथ में चली गई। पानीपत में इब्राहिम लोदी की पराजय और आगरा में राणा सांगा के हारने के पश्चात देश की राजनैतिक स्थिति सर्वथा बदल गई।[२]

खुरासान खसमाना कीआ हिंदुसतानु डराइआ ॥
आपै दोसु न देई करता जमु करि मुगलु चड़ाइआ ॥
एती मार पई करलाणे तैं की दरदु ना आइआ ॥
(पन्ना ३६०)

बाबर की सेना को 'जंञ' (बारात) कहते हुए गुरु जी कहते हैं कि काबुल से पाप की बरात को लेकर बाबर ने हिंदुस्तान पर धावा बोला है तथा बर्बरतापूर्ण ढंग से हिंदुस्तान रूपी कन्या का दान मांगता है। मानवोचित लज्जा तथा धर्म कहीं डर के मारे छिप गए हैं और असत्य ही सर्वत्र प्रधान फिर रहा है। विवाह संस्कार को ब्राह्मण तथा काजी संपूर्ण किया करते थे, परंतु बलात्कार की यह सीमा थी कि विधिपूर्ण विवाह के स्थान पर शैतानी कार्य हो रहे थे। ये अत्याचार हिंदुओं तथा मुसलमानों की कन्याओं पर समान रूप से हो रहे थे और इस अवस्था में गुरु जी ने जो दर्द गायन किया उसका विवरण इस प्रकार है :

मुसलमानीआ पड़हि कतेबा कसट महि करहि खुदाइ वे लालो ॥
जाति सनाती होरि हिदवाणीआ एहि भी लेखै लाइ वे लालो ॥
खून के सोहिले गावीअहि नानक रतु का कुंगू पाइ वे लालो ॥ (पन्ना ७२२)

बाबर की सेना जिधर से गुजर गई थी, मानो शमशान का हृदय-विदारक दृश्य प्रस्तुत करती चली गई। चारों ओर लाशों के ढेर थे:

साहिब के गुण नानकु गावै मास पुरी विचि आखु मसोला ॥ (पन्ना ७२२)

प्रो सुरिंदर सिंघ (जोसन) लिखते हैं,[३] "गुरु जी ने जहां बाबर के अत्याचारों की घोर निंदा की वहां तत्कालीन भारतीय राजा वर्ग की

असहाय एवं दयनीय दशा तथा उनकी लोक-हितों की अवहेलना के कारण उन्हें साधारण जनता को दुख दैन्य की दो-पाट चक्की में पिसने के लिये विवश करने वाले अयोग्य एवं कायर नेता घोषित किया :

सकता सीहु मारे पै वगै खसमै सा पुरसाई ॥
रतन विगाड़ि विगोए कुतीं मुइआ सार न काई ॥ (पन्ना ३६०)

गुरु नानक साहिब के समय भारतीय राजा वर्ग निर्जीव था तथा मुगल आक्रमणकारी के सम्मुख खड़े होने की सत्ता उनमें बिलकुल नहीं थी। यही कारण है कि गुरु जी ने आक्रमणकारियों तथा उनके सामने बलहीन दिखाई देने वाले राजा वर्ग दोनों की विलासपूर्ण रुचियों की भर्त्सना की।[४]

बाबर के आक्रमण के समय ऐमनाबाद की जो दुर्दशा हुई, उसका वर्णन आसा राग की दो असटपदियों में मिलता है। ये असटपदियां न केवल अपने विषय के कारण भारतीय भक्ति-काव्य की अनुपम निधि हैं, वरन् अपने काव्य-स्तर की साहित्यिक तथा ऐतिहासिक महानता के कारण एक निपुण नीतिज्ञ एवं व्यवहारिक जीवन के तत्वेत्ता के चरित्र का अनुपम चित्र हैं। गुरु नानक साहिब स्वयं इस दुर्दशा के केवल दर्शक ही नहीं थे अपितु शिकार भी थे। राजनीतिक स्थिति का श्री गुरु ग्रंथ साहिब का यह मार्मिक चित्र एक दर्द-दीवाने देश-भक्त के हृदय का उद्गार है।[५]

जिन सिरि सोहनि पटीआ मांगी पाइ संधूरु ॥
से सिर काती मुंनीअन्हि गल विचि आवै धूड़ि ॥
महला अंदरि होदीआ हुणि बहणि न मिलन्हि हदूरि ॥ . . .
जदहु सीआ वीआहीआ लाड़े सोहनि पासि ॥
हीडोली चड़ि आईआ दंद खंड कीते रासि ॥
उपरहु पाणी वारीऐ झले झिमकनि पासि ॥
इकु लखु लहन्हि बहिठीआ लखु लहन्हि खड़ीआ ॥
गरी छुहारे खांदीआ माणन्हि सेजड़ीआ ॥
तिन्ह गलि सिलका पाईआ तुटन्हि मोतसरीआ ॥
धनु जोबनु दुइ वैरी होए जिन्ही रखे रंगु लाइ ॥
दूता नो फुरमाइआ लै चले पति गवाइ ॥
(पन्ना ४१७)

अगली असटपदी का विषय भी इसी प्रकार है:

कहां सु घर दर मंडप महला कहा सु बंक सराई ॥
कहां सु सेज सुखाली कामणि जिसु वेखि नीद न पाई ॥
कहा सु पान तंबोली हरमा होईआ छाई माई ॥
(पन्ना ४१७)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में प्रस्तुत इस राजनीतिक स्थिति के अध्ययन से एक बात स्पष्ट है कि बाबरादि विदेशी आक्रमणकारियों को भारत के धन-वैभव तथा यहां के शासक वर्ग की विलासप्रियता के कारण निर्बल दशा ने ही आक्रमण करने का अवसर दिया। इस शासक वर्ग ने भारतीय निम्न वर्ग का शोषण कर उसे निर्धन से अति निर्धन कर दिया था, परंतु वे स्वयं महलों तथा मंडप-माड़ियों में विलासपूर्ण जीवन व्यतीत कर रहे थे। उनके पापों से एकत्रित की गई माया ही उनकी शत्रु सिद्ध हुई, जिसे लूटने के लिये मुगल आक्रमणकारियों ने उनकी बहू-बेटियों को हरमों तथा रनिवासों से खींच-खींच कर उनका अपमान किया और उनकी धन-दौलत को लूटा:

इसु जर कारणि घणी विगुती इनि जर घणी खुआई ॥
पापा बाझहु होवै नाही मुइआ साथि न जाई ॥
जिस नो आपि खुआए करता खुसि लए चंगिआई ॥ (पन्ना ४१७)

उस समय के लोदी वंश की असहाय स्थिति की दशा सोमनाथ मंदिर के महमूद-कालीन पुजारियों से अधिक अच्छी नहीं थी। बाबर के आक्रमण की खबर सुन कई पीरों ने तावीज-टोणा करके उसे रोकने का निष्फल यत्न किया, परन्तु उस सब के देखते-देखते वज्र समान मंदिर जलकर राख़ हो गए और राजकुमारों को टुकड़े-टुकड़े करके मिट्टी में मिला दिया गया। पीरों के तावीजों से कोई मुगल आक्रमणकारी अंधा न हुआ और कोई पीर अपनी करामात न दिखा सका :

कोटी हू पीर वरजि रहाए जा मीरु सुणिआ धाइआ ॥
थान मुकाम जले बिज मंदर मुछि मुछि कुइर रुलाइआ ॥
कोई मुगलु न होआ अंधा किनै न परचा लाइआ ॥ (पन्ना ४१७-१८)

मुगल राज्य और सिक्ख गुरु साहिबान

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में गुरु नानक साहिब ने मुगल-पठानों की इस लड़ाई का अनुभवपूर्ण दृश्य प्रस्तुत किया है। गुरु जी लिखते हैं : मुगल-पठानों की लड़ाई में बड़े जोर की तेग चली। मुगलों ने तोपें दागीं, पठानों ने हाथियों को तुंद एवं मदमस्त करके छोड़ा। हिंदू, तुर्क, भट्टी (राजपूत) तथा ठाकुरों की स्त्रियां, जिनके पति युद्ध से लौटकर नहीं आए, अपने लिबास फाड़कर विलाप कर रही थीं और कुछ मरकर शमशान पहुंच गईं।

मुगलों ने केवल भारतीय जनता पर ही अत्याचार नहीं किए, बल्कि मुगल शासन के भारत में सुदृढ़ होने के पश्चात श्री गुरु अरजन देव जी का बलिदान, श्री गुरु तेग बहादर जी की कुर्बानी तथा श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के मासूम साहिबजादों की शहीदी, मुगल राज्य के अत्याचार की चरम सीमा थी। सम्राट नूरुद्दीन मुहम्मद जहांगीर, जिसके हुक्म से श्री गुरु अरजन देव जी का बलिदान हुआ, स्वयं अपनी डायरी 'तुजकि-जहांगीरी' में गुरु जी की शहीदी के १६ दिन पश्चात् अपने दृष्टिकोण के अनुसार इस घटना का ब्योरा देता है :

"गोइंदवाल, जो ब्याह (ब्यास) के किनारे है, में पीरों बुजुर्गों के वेष में अरजन नाम का हिंदू था, उसने बहुत से भोले-भाले हिंदुओं, बल्कि बेसमझ और मूर्ख मुसलमानों में भी अपनी विधियों में विश्वास स्थापित कर अपनी बुजुर्गी और ईश्वर के साथ निकटता का ढोल बहुत ऊंचा पीटा हुआ था (अर्थात् बहुत ख्याति प्राप्त की हुई थी)। लोग उसे गुरु कहते थे। चारों ओर से पाखंडी तथा पाखंड के पुजारी उसके पास आकर उस पर पूरा-पूरा विश्वास व्यक्त करते थे। तीन-चार पुश्तों से उसकी यह दुकान गर्म थी। कितनी देर से मेरे दिल में यह विचार आता था कि इस झूठ के व्यापार को बंद करना चाहिए या उस (गुरु) को मुसलमान मतावलंबी बनाना चाहिए। यहां तक कि इन दिनों में ही खुसरो ने इधर से दरिया पार किया। इस जाहिल तथा हकीर आदमी (खुसरो) ने इरादा किया कि सदैव उस (गुरु) के निकट रहे। वह उसे (गुरु जी) मिला और कई पूर्व निश्चित विषयों पर विचार-विमर्श किया।" . . .

"जब यह बात मेरे कानों तक पहुंची तो मैं पहले ही इनके झूठ को भली-भांति जानता था। मैंने आज्ञा दी कि उस (गुरु अरजन देव जी) को मेरे सम्मुख पेश किया जाये और मैंने उसके घर-घाट और बच्चों को मुरतजा खां को दान कर दिया तथा उसका माल-असबाब जब्त करने की आज्ञा दी कि उसे आतंकित किया जाए, मारा जाए तथा कष्ट देकर कत्ल कर

दिया जाए।"

श्री गुरु अरजन देव जी तथा उनके पूर्ववर्ती श्री गुरु ग्रंथ साहिब के बाणीकार अत्यंत निर्भीक एवं सत्यमार्ग-अनुगामी-साधक थे जिन्होंने झूठ तथा अन्याय के आगे कभी सिर न झुकाया। श्री गुरु अरजन देव जी ने जहांगीर की चुनौती को स्वीकार किया और उन्होंने अत्याचार के सम्मुख घुटने नहीं टेके। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में अपने जीवन के सिद्धांत को उन्होंने इन शब्दों में प्रस्तुत किया :

पहिला मरणु कबूलि जीवण की छडि आस ॥
होहु सभना की रेणुका तउ आउ हमारै पासि ॥
(पन्ना ११०२)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब के रचयिताओं ने जिस परंपरागत जीवन-सिद्धांत का प्रतिपादन किया था उस महान ग्रंथ के संपादक श्री गुरु अरजन देव जी का बलिदान, उनकी व्यवहारिक जीवन में परिणति थी। श्री गुरु अमरदास जी ने रामकली राग (अनुंद साहिब) में लिखा है :

खंनिअहु तिखी वालहु निकी एतु मारगि जाणा ॥
(पन्ना ९१८)

यह शबद भक्त फरीद जी की सूही राग में रचना की प्रतिध्वनि है :

वाट हमारी खरी उडीणी ॥
खंनिअहु तिखी बहुतु पिईणी ॥ (पन्ना ७९४)

श्री गुरु नानक देव जी ने इस सिद्धांत को बड़े निर्भीक शब्दों में प्रस्तुत किया है :

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ ॥
सिरु धरि तली गली मेरी आउ ॥
इतु मारगि पैरु धरीजै ॥
सिरु दीजै काणि न कीजै ॥ (पन्ना १४१२)

उन्होंने तो मरना शूरवीरों का परंपरागत अधिकार बताया है, क्योंकि मरने से ही शूरवीरों को सम्मान प्राप्त होता है :

मरणु मुणसा सूरिआ हकु है जो होइ मरनि परवाणो ॥
सूरे सेई आगै आखीअहि दरगह पावहि साची माणो ॥ (पन्ना ५७९)

श्री गुरु नानक देव जी से पूर्व ऐसी निर्भयता भक्त कबीर जी जैसे साधकों ने व्यक्त की थी :

कबीर जिसु मरने ते जगु डरै मेरे मनि आनंदु ॥
मरने ही ते पाईऐ पूरनु परमानंदु ॥
(पन्ना १३६५)

भक्त कबीर जी ने शूरवीर की पहचान इस प्रकार बताई है :

सूरा सो पहिचानीऐ जु लरै दीन के हेत ॥
पुरजा पुरजा कटि मरै कबहू न छाडै खेतु ॥
(पन्ना ११०५)

तत्कालीन राजनीतिक स्थिति का सामना श्री गुरु ग्रंथ साहिब के बाणीकारों ने इसी सिद्धांत के प्रकाश में किया। श्री गुरु तेग बहादर जी ने भी श्री गुरु ग्रंथ साहिब में इस सिद्धांत को इन शब्दों में प्रस्तुत किया :

भै काहू कउ देत नहि नहि भै मानत आन ॥
(पन्ना १४२७)

वे न किसी से डरे न और उन्होंने किसी को डराया। अपने पिता के बलिदान का वर्णन 'बचित्र नाटक' में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने इन शब्दों में किया :

धरम हेत साका जिनि कीआ ॥
सीसु दीआ पर सिररु न दीआ ॥१४॥१५॥

राजनीतिक स्थिति द्वारा प्रस्तुत की गई परिस्थितियों का जो समाधान श्री गुरु ग्रंथ साहिब के बाणीकारों ने प्रस्तुत किया, वह भारतीय इतिहास में केवल अद्वितीय ही नहीं, वरन् एक ऐतिहासिक युग का नवनिर्माण है, जिसने देश-कौम के गौरव, सम्मान तथा धर्म

की रक्षा की।

धार्मिक स्थिति

मुगलों के आगमन तक देश में चल रहे धार्मिक आंदोलन दो भागों में बंट चुके थे। एक वर्ग तथाकथित नीची जातियों का था और दूसरा तथाकथित ऊंची जातियों का। प्रथम वर्ग पर वज्रपानी सिद्धों और नाथ पंथियों का विशेष प्रभाव था और उन्होंने इस वर्ग को एक विशिष्ट आंदोलन का रूप प्रदान किया। इस वर्ग पर मुसलमानी एकेश्वरवाद का भी प्रभाव था। हिंदी साहित्य के संतों का साहित्य इसी धारा का प्रतिनिधित्व करता है। ऊंची जातियों में वैष्णव धर्म का आंदोलन चला, जो कि प्राचीन मर्यादाओं के प्रति श्रद्धा तथा भक्ति से पूर्ण था, परन्तु मुगल काल में जनता में विलास की भावना बढ़ गई। धनी-मानी लोग शृंगार रस की लीलाओं में आनंद लेने लगे। फलस्वरूप मधुर भाव उपासना पद्धति का दुरुपयोग प्रारंभ हुआ।[६] उपासना के इस विकृत रूप का वर्णन डॉ. सर गोकल चंद नारंग ने अपने शब्दों में किया है, "हिंदुओं की दशा उस समय अत्यधिक घृणा योग्य थी। साधारणतया धर्म केवल इस बात का नाम था कि विशेष ढंग से चौका-चूल्हा बनाकर रसोई पकाना, तीर्थ-स्नान अथवा कतिपय जीवन तथा मृत्यु के संस्कारों का अंधानुसरण। वेद-शास्त्र केवल पंडितों की जागीर थी। नकल ने असल को दबा लिया था। हिन्दू धर्म के उच्च-आत्मिक भाव दिखावे के आवरण के नीचे दब चुके थे। प्राधीनता ने हिन्दुओं के धैर्य को मृतप्राय कर दिया था।"[७]

श्री गुरु ग्रंथ साहिब ने वैष्णव धर्म की इस विकृतावस्था की विशेष रूप से विवेचना की है:

१. लीलागान की विकृति :

वाइनि चेले नचनि गुर ॥
पैर हलाइनि फेरन्हि सिर ॥
उडि उडि रावा झाटै पाइ ॥
वेखै लोकु हसै घरि जाइ ॥
रोटीआ कारणि पूरहि ताल ॥
आपु पछाड़हि धरती नालि ॥
गावनि गोपीआ गावनि कान्ह ॥
गावनि सीता राजे राम ॥ (पन्ना ४६५)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में लीला की आलोचना:

घड़ीआ सभे गोपीआ पहरे कंन्ह गोपाल ॥
गहणे पउणु पाणी बैसतंरु चंदु सूरजु अवतार ॥
सगली धरती मालु धनु वरतणि सरब जंजाल ॥
(वही)

२. पूजा के नाम पर आडंबर

पड़ि पुसतक संधिआ बादं ॥
सिल पूजसि बगुल समाधं ॥
मुखि झूठ बिभूखण सारं ॥
त्रैपाल तिहाल बिचारं ॥
गलि माला तिलकु लिलाटं ॥
दुइ धोती बसत्र कपाटं ॥
जे जाणसि ब्रहमं करमं ॥
सभि फोकट निसचउ करमं ॥ (पन्ना ४७०)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब द्वारा प्रतिपादित पूजा:

कहु नानक निहचउ धिआवै ॥
विणु सतिगुर वाट न पावै ॥ (वही)

३. वैष्णव भोजन शुद्धि

श्री गुरु ग्रंथ साहिब तथा शुद्धि :

कहु नानक सचु धिआईऐ ॥
सुचि होवै ता सचु पाईऐ ॥ (पन्ना ४७२)

निर्गुण मत की ज्ञानाश्रयी शाखा तथा हठयोग की धारा :

भक्त नामदेव जी, भक्त कबीर जी, भक्त रविदास जी आदि संतों ने निर्गुण मत की ज्ञानाश्रयी धारा को व्यवस्थित रूप दे दिया था। इस शाखा की पृष्ठभूमि में वैष्णव मत तथा नाथ

योगी मत दोनों की साधनाएं थीं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब के रचयिताओं को नाथ योगियों द्वारा सिद्ध-साधना का संशोधित रूप बहुत कुछ स्वीकार हुआ, परन्तु गोरख नाथ के उपरांत नाथ योगी मत भी कई एक विकृतियों का शिकार हो गया था। योग केवल दिखावे मात्र का योग रह गया था। गुरु नानक साहिब की बाणी 'सिध गोसटि', 'आसा की वार' तथा अन्य बाणियों में योगियों के भेषाचार की आलोचना मिलती है। असली और नकली योग का विवरण गुरु नानक साहिब की इन पंक्तियों में है :

जोगु न खिंथा जोगु न डंडै जोगु न भसम चड़ाईऐ ॥
जोगु न मुंदी मूंडि मुडाइऐ जोगु न सिंङी वाईऐ ॥ . . .
जोगु न बाहरि मड़ी मसाणी जोगु न ताड़ी लाईऐ ॥
जोगु न देसि दिसंतरि भविऐ जोगु न तीरथि नाईऐ ॥ (पन्ना ७३०)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब का गुरमति योग :

अंजन माहि निरंजनि रहीऐ जोग जुगति इव पाईऐ ॥
गली जोगु न होई ॥
एक द्रिसटि करि समसरि जाणै जोगी कहीऐ सोई ॥ (पन्ना ७३०)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में आसा की वार के साक्ष्य से पता चलता है कि तत्कालीन योगी लोग घर त्याग कर शमशान में नंगे होकर विभूत लगाकर अनाहार मौन तपस्या करते थे, पांव से नंगे रहकर कंद-मूल खाकर साधना करते थे। गुरु जी कहते हैं :

--बहु तीरथ भविआ ॥ तेतो लविआ ॥
बहु भेख कीआ देही दुखु दीआ ॥
सहु वे जीआ अपणा कीआ ॥
अंनु न खाइआ सादु गवाइआ ॥
बहु दुखु पाइआ दूजा भाइआ ॥
बसत्र न पहिरै ॥ अहिनिसि कहरै ॥
मोनि विगूता ॥ किउ जागै गुर बिनु सूता ॥
पग उपेताणा ॥ अपणा कीआ कमाणा ॥
अलु मलु खाई सिरि छाई पाई ॥
मूरखि अंधै पति गवाई ॥
विणु नावै किछु थाइ न पाई ॥ (पन्ना ४६७)
--मुंदा संतोखु सरमु पतु झोली धिआन की करहि बिभूति ॥
खिंथा कालु कुआरी काइआ जुगति डंडा परतीति ॥
आई पंथी सगल जमाती मनि जीतै जगु जीतु ॥ (पन्ना ६)

अर्थात् ऐ योगी! संतोष की मुद्राएं कानों में डालो, श्रम का खप्पर तथा झोली बनाओ अर्थात् मांगने से श्रम करके खाना अच्छा है, मृत्यु अवश्यंभावी है, इसे कंथा बनाओ, काया का सतीत्व ही तेरी युक्ति हो तथा विश्वास (प्रतीति) का डंडा तेरे पास हो। योगियों के 'आई पंथ' की परिभाषा दी है। सबको ही अपने पंथ का ख्याल करना असली 'आई पंथ' है। (योगियों के १२ पंथों में से एक इस पंथ वाले सहिष्णुता की भावना के लिये प्रसिद्ध हैं।) यदि अपने को जीत लिया तो जगत् को जीत लिया समझो।

विद्वानों का विचार है कि किसी समय नाथ पंथ का बड़ा प्रभाव था। अनेक सवर्ण और अवर्ण लोग इसके अनुयाई थे, किन्तु अवर्णों में तो इसका प्रचार बहुत ही अधिक था। गोरखनाथ से संबंधित अनेक लोक-वार्ताएं परंपरा से देश में प्रचलित हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि गोरखनाथ या नाथ पंथ का प्रभाव कभी लोकव्यापी था। सभी वर्ग और श्रेणियों में इसका समादर था, इसलिये राजा से रंक तक की लोक-कथाएं इससे संबंधित मिलती हैं।[८] श्री गुरु

ग्रंथ साहिब में 'गोरख' का नाम गुरु नानक साहिब की बाणी 'जपु' में आता है। विष्णु के नाम के लिये 'गोरख' का पर्यायवाची शब्द श्री गुरु ग्रंथ साहिब में प्रयुक्त हुआ है :

गुरु ईसरु गुरु गोरखु बरमा गुरु पारबती माई ॥
(पन्ना २)

योगी लोग गोरख का गुरु-रूप में आदर करते थे, ऐसा गोरख के समय से ही पता चलता है। गोरख-बाणी में लिखा है, 'नाथ कहंता सब जग नाथ्या, गोरष कहता गोइ।'[९] गोरखनाथ स्वयं गोरख की पहचान बताते हैं, 'जहां गोरथ तहां ज्ञान गरीबी दुंदु बदा नहीं कोई।'[१०] श्री गुरु ग्रंथ साहिब में भी योगियों द्वारा गोरख का नाम जपने का वर्णन है। भक्त कबीर जी कहते हैं :

जोगी गोरखु गोरखु करै ॥
हिंदू राम नामु उचरै ॥
मुसलमान का एकु खुदाइ ॥
कबीर का सुआमी रहिआ समाइ ॥ (पन्ना ११६०)

श्री गुरु रामदास जी के वचन हैं :

महला ४
पंडितु सासत सिम्रिति पड़िआ ॥
जोगी गोरखु गोरखु करिआ ॥ (पन्ना १६३)

ऐसे लोकव्यापी मत में विकारों को दूर करने के लिए योग तथा योगी की व्याख्या पर श्री गुरु ग्रंथ साहिब में विशेष ध्यान दिया गया। श्री गुरु नानक देव जी को अपने सिद्धांतों के प्रचार के लिये योग-साधना का सर्वसाधारण तथा सुगम स्वरूप प्रस्तुत करना पड़ा :

सुरति सबदु साखी मेरी सिंडी बाजै लोकु सुणे ॥
पतु झोली मंगण कै ताई भीखिआ नामु पड़े ॥
बाबा गोरखु जागै ॥
गोरखु सो जिनि गोइ उठाली करते बार न लागै ॥ (पन्ना ८७७)

शब्दार्थ : गुरु ग्रंथ साहिब के टिप्पणीकार लिखते हैं कि उक्त शबद (पद) तथा अन्य सम्बद्ध पद गोरख हटड़ी के स्थान पर योगियों के प्रति उच्चारण किए गए हैं। इस पद में गोरखमत अनुयाइओं को गुरु नानक साहिब ने कहा कि हमारा 'गोरख' सदैव शुद्ध-प्रबुद्ध हमारे साथ रहता है। 'गोरख' वही है जिसे सृष्टि की रचना करने में कुछ देर नहीं लगी। हम उसी 'गोरख' (प्रभु) की आराधना करते हैं तथा जो भी योगी इस कार्य में हमारा सहचर बने हम उसे असली गोरखमत अवलंबी मानकर उसके साथ संपर्क रखते हैं।

सूफी प्रेम-मार्गी धारा

सूफी अपने मुरीद (साधक) के सामने चार मार्ग रखते हैं--शरीयत, तरीकत, मारीफत और हकीकत। शरीयत, शरअ का ज्ञान प्राप्त करना है। शरीयत के पश्चात् तरीकत में पदापर्ण करना पड़ता है। नफ्स अथवा अहंभाव के साथ युद्ध करते हुए, इंद्रियों द्वारा प्रभु-प्राप्ति तक पहुंचने का मार्ग तरीकत है, जिसे कर्मकांड कहा जा सकता है। तरीकत में तप (द्वंद्व सहन), एकांत सेवन, मौन आदि की गणना है। मारीफत उपासना है, जिससे नफ्स (अहं भावना) दूर होती है, हृदय में परम ज्ञान का उदय होता है और साधक आरिफ (प्रज्ञा-सम्पन्न) कहलाने की योग्यता प्राप्त करता है। मुरीद या साधक को भ्वारिफ प्राप्त होने से पहले तौबा (प्रायश्चित), जहद (स्वेच्छादारिद्रय), सब्र (संतोष), शुक्र (कृतज्ञता), रिआज (दमन), तवक्कुल (ईश्वर-कृपा पर पूर्ण विश्वास) और रजा (तटस्था) में से निकलना पड़ता है जो उसके अंदर ईश्वर के प्रति अटल अनुराग (मोहब्बत या प्यार) को जागृत कर देते हैं और साधक पवित्र बन जाता है। हकीकत साधन नहीं, साधक की परम

सर्वश्रेष्ठ अनुभूति है, जिसकी प्राप्ति शरीयत एवं तरीकत के सम्यक् पालन के पश्चात् मारीफत द्वारा होती है।[११]

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में 'सूफी' शब्द का कहीं प्रत्यक्ष उल्लेख नहीं मिलता, परन्तु किसी अब्दाल नाम के सूफी फकीर को सूफी मत के चार भागों की व्याख्या करके बताते हुए श्री गुरु अरजन देव जी कहते हैं :

अलह अगम खुदाई बंदे ॥
छोडि खिआल दुनीआ के धंधे ॥
होइ पै खाक फकीर मुसाफरु इहु दरवेसु कबूलु दरा ॥
सचु निवाज यकीन मुसला ॥
मनसा मारि निवारिहु आसा ॥
देह मसीति मनु मउलाणा कलम खुदाई पाकु खरा ॥
सरा सरीअति ले कंमावहु ॥
तरीकति तरक खोजि टोलावहु ॥
मारफति मनु मारहु अबदाला
मिलहु हकीकति जितु फिरि न मरा ॥
कुराणु कतेब दिल माहि कमाही ॥
दस अउरात रखहु बद राही ॥
पंच मरद सिदकि ले बाधहु खैरि सबूरी कबूल परा ॥ *(पन्ना १०८३)*

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की सूफी मार्ग की यह विवेचना सूफियों से कुछ भिन्न नहीं है, केवल उसकी व्यवहारिक व्याख्या है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब का साधना मार्ग बहुत कुछ व्यवहारिक एवं यथार्थवादी होने के कारण कतिपय कर्मों को केवल वाह्याचार की अपेक्षा उनको यथार्थ रूप में अपनाने की सम्मति देता है। अत: सूफी मत के इन सोपानों की केवल व्याख्या ही की गई है। सूफी साधक शुद्ध सात्विक भावनाओं वाले फकीर थे, अत: उनके आचार की कोई भी आलोचना श्री गुरु ग्रंथ साहिब में नहीं मिलती।

गुरु नानक साहिब लिखते हैं कि धर्मान्ध शासक तथा उनके चाटुकार मुकद्दम खूंखार शेरों तथा शिकारी कुत्तों की भांति सोते-बैठते को जाकर जगा देते थे। चाकर वर्ग नाखूनों वाले जानवरों की भांति, अपने अन्याय करने वाले नाखूनों से लोगों को घायल करते थे और लोगों का लहू कुत्तों (मुकद्दमों) के द्वारा चूस लेते थे:

राजे सीह मुकदम कुते ॥
जाइ जगाइन्हि बैठे सुते ॥
चाकर नहदा पाइन्हि घाउ ॥
रतु पितु कुतिहो चटि जाहु ॥ *(पन्ना १२८८)*

("आदि ग्रंथ के परंपरागत तत्वों का अध्ययन" से सधन्यवाद)

संदर्भ-सूची :

१. हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृष्ठ १९१
२. हिंदी साहित्य की परंपरा, पूर्व मध्य युग, पृष्ठ ६४
३. आदि ग्रंथ और समाज, (निबंध), पंजाबी दुनिया, भाषा विभाग, पटियाला
४. उपरोक्त, पृष्ठ १११
५. गुरु ग्रंथ साहिब जी दा साहितक इतिहास, पृष्ठ २५५
६. ट्रांसफार्मेशन आफ सिखिज़्म, पृष्ठ ५
७. उपरोक्त
८. कबीर : एक विवेचन, पृष्ठ ९४-९५
९. गोरखबानी, सबदी नं. ११
१०. उपरोक्त, पृष्ठ १९५
११. डॉ. मुनशी राम, भक्ति का विकास, पृष्ठ ४००

गुरसिखा के मुह उजले करे हरि पिआरा

*-डॉ. सत्येन्द्र पाल सिंघ**

एक सच्चा सिक्ख मानव सभ्यता के एक चमकदार और आकर्षक आभूषण की तरह है जिससे समाज का गौरव बढ़ता है और जन-जन लाभान्वित होता है। अनुयायी किसी भी धर्म के हों, यदि वे अपने धर्म की शिक्षाओं का निष्ठा से पालन करते हैं तो इससे मानवीय मूल्य संरक्षित होते हैं। एक सिक्ख जब सच्चे सिक्ख की तरह आचरण करता है तो लगता है कि वह उस परमेश्वर की इच्छा और आज्ञा का अनुपालन कर रहा है जो सबका पिता है। सिक्ख अपने गुरु से गुरु की बाणी द्वारा जुड़ा हुआ है और सतिगुरु की बाणी, धुर की बाणी है अर्थात् परमात्मा की प्रेरणा है :

संतहु सुखु होआ सभ थाई ॥
पारब्रहमु पूरन परमेसरु रवि रहिआ सभनी जाई ॥रहाउ॥
धुर की बाणी आई ॥
तिनि सगली चिंत मिटाई ॥
दइआल पुरख मिहरवाना ॥
हरि नानक साचु वखाना ॥ (पन्ना ६२८)

जिस बाणी के द्वारा एक सिक्ख गुरु से जुड़ता है वह उस पारब्रह्म से सृजित होकर आयी है जो परम दयालु है, कृपा करने वाला है और सृष्टि में सर्वत्र व्याप्त है अर्थात् सारी सृष्टि जिसकी सत्ता के अधीन है। उसकी कृपा से सर्वत्र सुख व्याप्त हो रहा है और सारी चिंताएं दूर हो गई हैं।

परमात्मा की बाणी परमात्मा से कम महान कैसे हो सकती है? जिस तरह मनुष्य के शब्द उसके व्यक्तित्व को लाख छिपाने के बाद भी किसी न किसी रूप में व्यक्त कर ही देते हैं उसी तरह परमात्मा की बाणी उसकी महिमा के अनुरूप ही है। मनुष्य भय और दबाववश स्वयं को छिपाने का प्रयत्न करता है और कई बार उसकी वाणी से उसका आंकलन कठिन हो जाता है, किन्तु परमेश्वर तो भय-मुक्त है और वह सारे द्वेषों से भी मुक्त है, इसलिये परमेश्वर के शब्दों में उसका सच्चा स्वरूप और भाव बार-बार प्रकट होता है और सरलता से दिखायी दे जाता है। उस पारब्रह्म ने शबदों में स्वयं को प्रकट किया और सतिगुरु ने इन शब्दों के माध्यम से मनुष्य को पारब्रह्म के दर्शन कराने और उससे तदातम्य स्थापित करने के लिये प्रेरित किया। उन्होंने एक नितांत सीधा और सच्चा मार्ग सामने रखा जिससे मनुष्य को मोक्ष प्राप्त हो जाये। इस धुर की बाणी को अमृत की संज्ञा दी गयी :

गुर अंम्रित भिंनी देहुरी अंम्रितु बुरके राम राजे ॥
जिना गुरबाणी मनि भाईआ अंम्रिति छकि छके ॥
गुर तुठै हरि पाइआ चूके धक धके ॥
हरि जनु हरि हरि होइआ नानकु हरि इके ॥
(पन्ना ४४९)

परमात्मा अमृत का सागर है और अपने अमृत से सभी को निहाल कर रहा है। जो भी धुर की बाणी से जुड़ गया वही इस अमृत का पान कर सका और आवागमन से मुक्त हो गया

****E*-१७१६, राजाजी पुरम, लखनऊ-२२६०१७, मो : ९४१५९-६०५३३*

अथवा अमरत्व प्राप्त कर गया। ऐसा मनुष्य हरि से जुड़कर हरि जैसा हो गया और उसमें व हरि में कोई भेद ही नहीं रहा अर्थात् हरि ने उसे अपने अस्तित्व का ही हिस्सा बना लिया। एक गुरसिक्ख के लिये यह बड़े भाग्य की बात है कि सतिगुरु ने उसे गुरबाणी के माध्यम से मुक्ति का एक सहज मार्ग दिखाया और सरल अवसर प्रदान किया जिसे प्राप्त करने के लिये कितने ही जन्म व्यर्थ चले जाते हैं।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब को गुरु मान मस्तक झुकाना है परंतु इसके साथ-साथ इसमें अंकित धुर की बाणी को पढ़ना, सुनना और समझना भी है। जब एक गुरसिक्ख श्री गुरु ग्रंथ साहिब के समक्ष यह विश्वास करके माथा टेकता है कि इससे उसे मुक्ति का मार्ग प्राप्त होने वाला है और इस चेतना के साथ गुरबाणी से जुड़ता है कि ऐसा करके वह हरि का हिस्सा बनने जा रहा है तो उसमें गुरबाणी के प्रति आदर, समर्पण, प्रेम और एकाग्रता स्वयं ही उत्पन्न हो जाती है और गुरबाणी उसके आचरण में उतर आती है। उस समय एक 'गुरसिक्ख' बदल कर 'गुरमुख' हो जाता है। 'गुरसिक्ख' को 'गुरमुख' बनना चाहिये, सारे भ्रम और संशयों का त्याग करके अपने पूरे विश्वास को गुरु और गुरबाणी पर टिका देना चाहिये। ऐसा तब तक संभव नहीं है जब तक गुरबाणी की महिमा का ज्ञान और उस पर दृढ़ आस्था न उत्पन्न हो जाये। परमात्मा हम पर कृपा करके हमें शबद के रूप में दर्शन दे रहा है और हमसे निकटता स्थापित कर रहा है। उसे ऐसे लोग ही प्रिय हैं जो उसे अपने निकट जानें और उसे देख सकें :

ते गुर के सिख मेरे हरि प्रभि भाए
जिना हरि प्रभु जानिओ मेरा नालि ॥
जन नानक कउ मति हरि प्रभि दीनी
हरि देखि निकटि हदूरि निहाल निहाल निहाल निहाल ॥ (पन्ना ९७८)

उपरोक्त वचन एक गुरमुख के लिये बहुत ही अमूल्य है। इसमें उन सारी भ्रांतियों को तोड़ा गया है कि परमात्मा दूर है, अलभ्य है और दृष्टि से परे है। गुरु साहिब अपने इस वचन में कहते हैं कि परमात्मा को तो ऐसे ही लोग अच्छे लगते हैं जो उसे अपने साथ खड़ा हुआ पाते हैं। हरि ने मनुष्य को ऐसी सामर्थ्य प्रदान की है कि वो हरि के प्रत्यक्ष दर्शन कर सके और अपने जीवन को हर दृष्टि से सार्थक कर सके। एक गुरसिक्ख जब गुरबाणी से जुड़ता है और परमात्मा द्वारा प्रदान की गयी मति स्वयं खुलने लगती है और शबद के भीतर परमात्मा उसे दिखने लगता है। गुरबाणी तो सभी का उद्धार करने वाली है:

सतिगुर बचन तुम्हारे ॥
निरगुण निसतारे ॥१रहाउ॥
महा बिखादी दुसट अपवादी ते पुनीत संगारे ॥
जनम भवंते नरकि पड़ंते तिन्ह के कुल उधारे ॥
कोइ न जानै कोइ न मानै से परगटु हरि दुआरे ॥
कवन उपमा देउ कवन वडाई नानक खिनु खिनु वारे ॥ (पन्ना ४०६)

गुरबाणी दुष्टों-दुराचारियों के जीवन को निर्मल बनाने में सक्षम है। गुणों से रहित लोगों का जन्म-जन्म आवागमन के फेर में पड़े हुओं का उद्धार करने में समर्थ है। जिनका कोई भी मान-सम्मान और स्थान नहीं गुरबाणी उन्हें भी परमात्मा के दरबार में उच्च प्रतिष्ठा दिला सकती है। इसकी उपमा ही नहीं की जा सकती; इसके गुणों का वर्णन ही नहीं किया जा सकता; बस, इस पर पल-पल कुर्बान ही हुआ जा सकता है।

जब हम गुरबाणी पर कुर्बान जाने की बात करते हैं तो स्वयं ही हमारे अंदर गुरबाणी के सत्कार का संस्कार पैदा हो जाता है, गुरबाणी को अंगीकार करने का सलीका आ जाता है। गुरबाणी पढ़ने, गायन करने या सुनने के साथ-साथ कुर्बान जाने का विषय है। एक गुरसिक्ख जब गुरबाणी पर कुर्बान जाता है तो वह सच्चे आनंद से भर उठता है:

तिना अनंदु सदा सुखु है जिना सचु नामु आधारु ॥
गुर सबदी सचु पाइआ दूख निवारणहारु ॥
सदा सदा साचे गुण गावहि साचै नाइ पिआरु ॥
किरपा करि कै आपणी दितोनु भगति भंडारु ॥
(पन्ना ३६)

जिन्होंने मात्र शबद को अपने जीवन का आधार बना लिया है उन्हें सदैव आनंद और सुख प्राप्त होता रहता है। शबद से पारब्रह्म प्राप्त होता है और सारे दुखों का निवारण हो जाता है। शबद-गायन से परमात्मा के प्रति प्रेम उपजता है और उस प्रेम में परमात्मा की कृपा से उसकी भक्ति का तो आनंद ही कुछ और है:

मन रे सदा अनंदु गुण गाइ ॥
सची बाणी हरि पाईऐ हरि सिउ रहै समाइ ॥१॥रहाउ॥
सची भगती मनु लालु थीआ रता सहजि सुभाइ ॥
गुर सबदी मनु मोहिआ कहणा कछू न जाइ ॥
जिहवा रती सबदि सचै अंम्रितु पीवै रसि गुण गाइ ॥
गुरमुखि एहु रंगु पाईऐ जिस नो किरपा करे रजाइ ॥ (पन्ना ३६)

गुरबाणी में रम जाने वाले गुरमुख का रंग ऐसा निराला हो जाता है कि जिह्वा पर शबद उसे अमृत-से लगते हैं, उसका मन परमात्मा की भक्ति से सराबोर हो जाता है और यह भक्ति उसे सहज ही मिल जाती है जो अन्य को नाना प्रकार के प्रयास, हठ, तप, साधना करने के बाद भी दुर्लभ रहती है। उसे सदैव शबद में ही आनंद मिलता है और इस आनंद की अवस्था में ही वह परमात्मा तक जा पहुंचता है। जो शबद से जुड़ता है उस पर परमात्मा स्वयं कृपा करता है।

एक सच्चे सिक्ख का लक्ष्य सांसारिक उपलब्धियां प्राप्त करना एवं भौतिक सुख-साधना अर्जित करना नहीं है जो तृष्णा को बढ़ाने वाले और जीवन को असहज बनाने वाले हैं। ऐसी मनोकामनाएं लेकर शबद-गुरु के समक्ष मस्तक झुकाना अपनी अज्ञानता को प्रकट करना है, अपने जीवन को व्यर्थ गंवा देना है और उस सुअवसर से वंचित रह जाना है जो हमें गुरबाणी से जुड़ने के रूप में मिला है। गुरबाणी को श्वास-श्वास बसाये रखने में ही उद्धार है:

अनदिनु नामु जपहु गुरसिखहु हरि करता सतिगुरु घरी वसाए ॥
सतिगुर की बाणी सति सति करि जाणहु गुरसिखहु हरि करता आपि मुहहु कढाए ॥
गुरसिखा के मुह उजले करे हरि पिआरा गुर का जैकारु संसारि सभतु कराए ॥
जनु नानकु हरि का दासु है हरि दासन की हरि पैज रखाए ॥ (पन्ना ३०८)

जो लोग दिन-रात उसका स्मरण करते हैं, उसकी बाणी को आदर सहित अंगीकार करते हैं अथवा शबद को परमात्मा के तुल्य सम्मान देते हैं, परमात्मा अपने उन भक्तों की मर्यादा स्वयं सुरक्षित रखता है और उनका मान बढ़ाता है। इस भाव को अपने मन में धारण करने के बाद एक गुरसिक्ख शबद से जुड़ेगा तो परमेश्वर अपनी कृपा से उसे निहाल, निहाल, निहाल कर देगा।

थाल विचि तिंनि वसतू पईओ . . .

*-डॉ. मनजीत कौर**

समूची मानवता की रहनुमाई करने वाला पावन ग्रंथ, जिसकी संपादना बाणी के बोहिथ श्री गुरु अरजन देव जी ने की, यह पुनीत कार्य १६०१ ई में प्रारंभ हुआ और १६०४ ई में इस महान कार्य की सम्पूर्णता हुई।

अनेकता में एकता, धर्म, दर्शन, इतिहास, प्राचीन गाथाएं, मानव-मूल्य, युग विशेष की परिस्थितियां सब कुछ जितनी गहरी होंगी उसे उतने ही कीमती और अनमोल रत्न प्राप्त हुए हैं इस विलक्षण ग्रंथ से। निर्भर करता है खोजी पर कि इस संदर्भ में ये काव्य-पंक्तियां कितनी सटीक हैं :

जिन खोजा तिन पाईआ गहरे पानी पैंठ।
मैं बोरन डूबन डरी रही किनारे बैठ।

अत: स्पष्ट है कि इस पावन बाणी को जितनी श्रद्धा, विश्वास, एकाग्रता एवं तन्मयता से जिसने पढ़-सुन कर मनन किया उनकी अवस्था को शब्दों द्वारा बयान नहीं किया जा सकता। डॉ. परशुराम चतुर्वेदी के शब्दों में "यह (पावन) ग्रंथ वास्तव में एक अपूर्व शब्दकोश है जिसमें न केवल परमतत्व के आध्यात्मिक स्वरूप की एक अनुपम झांकी मिलती है अपितु इसमें गहरी अनुभूति पर ऐसे अनेक संदेश भी मिलते हैं जिनसे सर्वांगीण मानव-जीवन के निर्माण की प्रेरणा ग्रहण की जा सकती है।" *(श्री गुरु ग्रंथ साहिब परिचय, पृष्ठ २०६)*

१४३० पन्नों की अमूल्य निधि में विविध भाषाओं, विविध धर्मों, विविध संतों-भक्तों की अमृतमयी बाणी के अनुपम हीरे-मोती कितनी गुणवत्ता संजोए हैं, इसको शब्दों द्वारा बयान करना नामुमकिन है। अत: पंचम पातशाह धन्य-धन्य श्री गुरु अरजन देव जी ने 'मुंदावणी' शीर्षक में इस विलक्षण ग्रंथ की महिमा को बयान करते हुए कितना सुंदर रूपक बांधा है, यथा:

थाल विचि तिंनि वसतू पईओ सतु संतोखु वीचारो ॥
अंम्रित नामु ठाकुर का पइओ जिस का सभसु अधारो ॥
जे को खावै जे को भुंचै तिस का होइ उधारो ॥
एह वसतु तजी नह जाई नित नित रखु उरि धारो ॥ *(पन्ना १४२९)*

अर्थात् इस पावन ग्रंथ रूपी (थाल) में सत्य, संतोष एवं वीचार (चिंतन) का संकलन है। इस थाल में ईश्वर-प्रदत्त आत्मिक जीवन देने वाला नाम-रस डाला गया है, जिसका आधार (आश्रय) प्रत्येक जीवन के लिए अनिवार्य है। इस आत्मिक खुराक को अगर कोई मनुष्य हमेशा खाता रहे तथा आनंद सहित भोगता रहे तो विषय-विकारों से बचा जा सकता है।

हे भाई! अगर आत्मिक उद्धार की आवश्यकता है तो आत्मिक आनंद देने वाली 'नाम' रूपी यह अनुपम वस्तु त्यागी नहीं जा सकती, अत: इसे सदैव हृदय में संभाल कर रखो।

पंचम पातशाह कलयुगी जीवों को दिशा-निर्देश करते हुए वचन करते हैं कि इस नाम

*२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४ मो: ०९३१४६-०९२९३

के द्वारा प्रभु के चरणों से लग कर घोर अंधकारमयी संसार-समुद्र पार किया जा सकता है और इस तरह परमेश्वर का प्रकाश सर्वत्र दिखाई देने लगता है।

श्री गुरु ग्रंथ कोश में डॉ. भाई वीर सिंघ ने **'मुंदावणी'** की बहुत सुंदर व्याख्या की है। साहित्य में एक ऐसी रचना जिसके प्रत्यक्ष अर्थ के अतिरिक्त और अर्थ या सार्थक पद भी बन जाते हैं। धातु है **'मुद'** अर्थात् प्रसन्न करना; पंजाबी में **'मुंदावणी'** जिसका भाव या अर्थ **'छिपा कर'** (मूंद कर) रखा हुआ है। पहेली पूछना, जो बात आसानी से समझ न आए। गुरबाणी में कई शब्दों के अर्थ बड़े गूढ़ हैं, जिन्हें रहस्यमयी ढंग से समझाया गया है। अगर इस पहेली के आंतरिक भाव को समझ लिया जाए तो हृदय खुशी से झूम उठता है। श्री गुरु अंगद देव जी का एक शबद इसी भाव को लक्षित करते हुए रचित है, यथा :

अखी बाझहु वेखणा विणु कंना सुनणा ॥
पैरा बाझहु चलणा विणु हथा करणा ॥
जीभै बाझहु बोलणा इउ जीवत मरणा ॥
(पन्ना १३९)

भक्त कबीर जी की बाणी में इस तरह के गूढ़ भाव व्यक्त करने वाले अनेक शबद दर्ज हैं। हिन्दी साहित्य में इन्हें **'उल्लबासियां'** कहा जाता है। राग आसा में भक्त कबीर जी का एक शबद यहां उल्लेखनीय है:

फीलु रबाबी बलदु पखावज कऊआ ताल बजावै ॥
पहिरि चोलना गदहा नाचै भैसा भगति करावै ॥
राजा राम ककरीआ बरे पकाए ॥
किनै बूझनहारै खाए ॥ (पन्ना ४७७)

उपरोक्त शबद के बाहरी अर्थ--"हाथी रबाब बजा रहा है, बैल पखावज बजा रहा है, कौआ मंजीरे बजा रहा है।" इस शबद का गूढ़ अर्थ है कि "ईश्वर ने जब कृपा की तो खोटे कर्मों को सुकर्मों में बदल दिया अर्थात् मनुष्य की पशु-वृत्ति सतसंगी स्वभाव में परिवर्तित हो गई।"

तीसरे पातशाह श्री गुरु अमरदास जी ने भी ईश्वरीय भोजन के थाल का जिक्र किया है, यथा:

थालै विचि तै वसतू पईओ हरि भोजनु अंम्रितु सारु ॥
जितु खाधै मनु त्रिपतीऐ पाईऐ मोख दुआरु ॥
इहु भोजनु अलभु है संतहु लभै गुर वीचारि ॥
एह मुदावणी किउ विचहु कढीऐ सदा रखीऐ उरि धारि ॥
एह मुदावणी सतिगुरू पाई गुरसिखा लधी भालि ॥
नानक जिसु बुझाए सु बुझसी हरि पाइआ गुरमुखि घालि ॥ (पन्ना ६४५)

तीसरे पातशाह का पावन फरमान है-- "एक थाल है। उसमें तीन पदार्थ परोसे गए हैं जो ईश्वरीय भोजन है, रूहानी (आत्मिक) खुराक है, जिसे खाने से मन को तृप्ति मिलती है तथा मोक्ष-द्वार की प्राप्ति होती है। ये तीनों पदार्थ गुप्त हैं। गुरु-दर्शाए मार्ग पर चल कर ही इनकी प्राप्ति संभव है। जिस पर परमेश्वर की कृपा होती है उसे यह गूढ़ रहस्य समझ आता है।"

आओ! गुरु-कृपा से इन तीन अनमोल रत्नों पर विचार करने की कोशिश करें :

१. सतु - सच अर्थात् ऊंचा आचरण
२. संतोखु - संतोष अर्थात् जो ईश्वर ने दिया है उसी में राजी (प्रसन्न) रहना।
३. वीचारो - चिन्तन अर्थात् आत्मिक जीवन की समझ नीर-क्षीर विवेकी बुद्धि।

१. सतु : उस परम पिता परमेश्वर का नाम सच है, जैसा कि गुरु नानक पातशाह ने जपु जी साहिब के पहले सलोक में उस प्रभु के सत्य

स्वरूप का वर्णन किया है :

आदि सचु जुगादि सचु ॥
है भी सचु नानक होसी भी सचु ॥ (पन्ना १)

अर्थात् उस परमेश्वर का नाम जगत-रचना से पूर्व भी सत्य था, वर्तमान में भी सत्य है तथा आने वाले समय में भी वह सदैव सत्य स्वरूप रहेगा।

ऐसे सदीवी सत्य-स्वरूप अथाह गुणों के मालिक प्रभु की सिफत-सलाह करने से जीव का हृदय भी गुणों से भर जाता है तथा विकार हृदय-घर से सहजता से बाहर निकलने शुरू हो जाते हैं। उस परमेश्वर का अमृतमयी नाम हृदय-घर में बसना शुरू हो जाता है। यहीं से शुरुआत होती है ऊंचे आचरण के निर्माण की। प्रभु-नाम के उच्चारण मात्र से मुख पवित्र हो जाता है। गुरबाणी का प्रमाण है :

सुणते पुनीत कहते पवितु सतिगुरु रहिआ भरपूरे ॥
बिनवंति नानकु गुर चरण लागे वाजे अनहद तूरे ॥ (पन्ना ९२२)

पवित्र आचरण की संरचना में गुरु की मध्यस्थता अति आवश्यक है, क्योंकि गुरु के बिना यह समझ पैदा ही नहीं हो सकती, यथा:

करि किरपा घरि आइआ गुर कै हेति अपारि ॥
वरु पाइआ सोहागणी केवल एकु मुरारि ॥
(पन्ना ४२८)

क्योंकि जीवन का वास्तविक मंतव्य गुरु द्वारा ही समझ आता है, यथा :

गुर की बाणी गुर ते जाती जि सबदि रते रंगु लाइ ॥
पवितु पावन से जन निरमल हरि कै नामि समाइ ॥ (पन्ना १३४६)

उस सच्चे प्रभु के नाम के साथ जुड़ने से हृदय रूपी कमल हमेशा खिला रहता है, यथा:

सचु बाणी सचु सबदु है जा सचि धरे पिआरु ॥
हरि का नामु मनि वसै हउमै क्रोधु निवारि ॥
मनि निरमल नामु धिआईऐ ता पाए मोख दुआरु ॥ (पन्ना ३३)

उस परमेश्वर का नाम करोड़ों पाप नाश करने में समर्थ है और गुरु-कृपा से जिन्हें यह अमोलक दात प्राप्त होती है उनका मन और बुद्धि दोनों पवित्र हो जाते हैं, उनकी करनी एवं कथनी निर्मल हो जाती है, यथा :

गुरमती मुख सोहणे हरि राखिआ उरि धारि ॥
ऐथै ओथै सुखु घणा जपि हरि हरि उतरे पारि ॥
(पन्ना १३४६)

२. सतोखु (संतोष) : संतोष को मनीषियों ने अति व्यापक मूल्य के रूप में माना है। संतोष अर्थात् यथा लाभ तथा संतुष्ट रहने की प्रवृत्ति। हमें जो ईश्वर ने दिया है उसी में उसका सहृदय से शुक्राना करना तथा हर हाल में खुश रहना है।

अक्सर इंसान अपने दुखों से उतना दुखी नहीं जितना दूसरों के सुखों को देखकर परेशानी में हो जाता है। अत: इंसानी फितरत है कि वह दूसरों का हक छीनने में कसर नहीं छोड़ता। इस संदर्भ में गुरबाणी हमारा मार्गदर्शन करती है, यथा:

हकु पराइआ नानका उसु सूअर उसु गाइ ॥
गुरु पीरु हामा ता भरे जा मुरदारु न खाइ ॥
(पन्ना १४१)

गुरु नानक पातशाह ने पराया हक मुसलमान भाई के लिए सूअर तथा हिंदू भाई के लिए गाय का मांस खाने के समान बताया है।

इच्छाओं का विस्तार इंसान के वास्तविक सुख, चैन, सुकून को छीन लेता है। हमारी इच्छाओं का दायरा जितना विस्तृत होगा उतना ही हम वास्तविक सुख-आनंद से वंचित हो जायेंगे।

पावन गुरबाणी गृहस्थी को यही पावन उपदेश देती है कि उचित साधनों से मेहनत करके नेक कमाई को मिल-बांट कर खाएं, यही जीव की वास्तविक साधना है, यथा गुरु नानक साहिब जी का पावन संदेश है :

घालि खाइ किछु हथहु देइ ॥
नानक राहु पछाणहि सेइ ॥ (पन्ना १२४५)

बाहरी चकाचौंध एवं लोक दिखावे में न पड़कर सच्चा एवं संतोषी जीवन-यापन करना ठीक वैसे ही है जैसे कमल जल में निर्लेप भाव से रहता है, यथा :

जैसे जल महि कमलु निरालमु मुरगाई नै साणे ॥
सुरति सबदि भव सागरु तरीऐ नानक नामु वखाणे ॥ (पन्ना ९३८)

वास्तव में वही योगी है जो माया में रहते हुए भी माया से निर्लिप्त है तथा संतोषी वृत्ति का है :

जोगु न बाहरि मड़ी मसाणी जोगु न ताड़ी लाईऐ ॥
जोगु न देसि दिसंतरि भविऐ जोगु न तीरथि नाईऐ ॥
अंजन माहि निरंजनि रहीऐ जोग जुगति इव पाईऐ ॥ (पन्ना ७३०)

और यह सब कुछ तभी संभव है जब ईश्वर-कृपा से हमारे हृदय में कोई किनका प्यार का, इस पावन बाणी का बस जाए, यथा पंचम पातशाह की ही बाणी का प्रमाण है :

किनका एक जिसु जीअ बसावै ॥
ता की महिमा गनी न आवै ॥ (पन्ना २६२)

३. वीचारो : आत्मिक जीवन की समझ जिसे गुरु-कृपा से प्राप्त हो जाती है वास्तव में उसी का ही लोक-परलोक सफल समझो। विचारहीन व्यक्ति अपने अहंकार के नशे में चूर रहता है। अपनी चतुराइयों तथा अक्लमंदी का झूठा अभिमान करता हुआ वो अपना जीवन नर्क बना लेता है, जैसा कि तीसरे पातशाह की बाणी इस संदर्भ में हमारा मार्गदर्शन करती है :

न सबदु बूझै न जाणै बाणी ॥
मनमुखि अंधे दुखि विहाणी ॥
सतिगुरु भेटे ता सुखु पाए ॥
हउमै विचहु ठाकि रहाए ॥ (पन्ना ६६५)

गुरु-शबद को विचार कर जीवन-मनोरथ को समझना तथा सफल जीवन जीने की कला गुरबाणी मुताबिक जीवन बनाने वालों का ही जीवन धन्य है :

गुरमुखि होवै सु गिआनु ततु बीचारै हउमै सबदि जलाए ॥
तनु मनु निरमलु निरमल बाणी साचै रहै समाए ॥ (पन्ना ९४६)

इसी भाव को जपु जी साहिब में गुरु पातशाह स्पष्ट करते हैं कि :

मति विचि रतन जवाहर माणिक जे इक गुर की सिख सुणी ॥
गुरा इक देहि बुझाई ॥
सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई ॥ (पन्ना २)

वस्तुत: जीवन कर्मकांडी होकर रह गया है। हम विचार ही नहीं करते कि अगर सतिगुरु की एक शिक्षा (उपदेश) पर भी सही मायने में अमल कर लिया जाए तो मनुष्य की बुद्धि में रत्न, जवाहरात और अमूल्य मोती उपज पड़ते हैं। गुरमति के अनुसार रत्न-वैराग्य का जवाहरात "नाम एवं ज्ञान" का तथा माणक "श्रवण एवं मनन" का प्रतीक माने गए हैं। अत: गुरदेव की एक सीख सुनने मात्र से हृदय में परमेश्वर के गुण पैदा हो जाते हैं। हे सतिगुरु! तेरे चरणों में यही विनती है कि समस्त जीवों का दाता हमें भूल न जाए अर्थात् हमारे मन से समस्त जीवों

को दातें बख्शने वाला दातार पिता विस्मृत न हो जाए।

मनुष्य जीवन में जिज्ञासु वृत्ति का हो जाना आध्यात्मिक सफर का पहला कदम है। जब हृदय किसी विशेष मकसद को लेकर प्रश्न करे कि मैं कौन हूं? मेरा जगत में आने का मकसद क्या है? ईश्वर से तथा जगत से मेरा क्या सम्बंध है? मैं ईश्वर से क्यों बिछुड़ा हूं? मेरे दुखों का कारण क्या है? आत्मिक सुख कैसे प्राप्त हो सकता है? फिर इन प्रश्नों के उत्तर की खोज प्रारंभ हो। गुरबाणी से जुड़ाव जिज्ञासु भी बनाता है तथा मार्गदर्शन भी करता है। श्री गुरु नानक देव जी ने जिज्ञासु मन का बहुत उपयोगी प्रश्न उठा कर उसका सुंदर सटीक उत्तर भी सुझाया है, यथा:

किव सचिआरा होईऐ किव कूड़ै तुटै पालि ॥
हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि ॥
(पन्ना १)

अर्थात् उस अकाल पुरख वाहिगुरु का हृदय में पावन प्रकाश कैसे हो? झूठ, फरेब का पर्दा कैसे हटे? हम सत्यमार्गी कैसे बनें? फिर स्वयं ही सहज जवाब (मार्ग) दर्शाया है कि केवल एक ही मार्ग है, हर हाल में उस मालिक की रजा (हुक्म) को खुशी से मान लेना और यह हुक्म प्रत्येक जीव के लिए अति आवश्यक है, क्योंकि यह जीव के साथ धुर (दरगाह) से ही चला आ रहा है। उसका हुक्म मीठा करके मानना ही उसकी दरगाह में प्रवान होने की पहली शर्त है। 'आसा की वार' बाणी में इसी भाव की पुष्टि हुई है, यथा :

हुकमि मंनिऐ होवै परवाणु ता खसमै का महलु पाइसी ॥
खसमै भावै सो करे मनहु चिंदिआ सो फलु पाइसी ॥ (पन्ना ४७१)

ये जो महल हैं अनमोल हैं, दुनियावी कोई भी कीमत चुका कर प्राप्त नहीं हो सकते, यह तो केवल गुरबाणी विचार की बरकतों से मिल सकता है, यथा :

मोलि कित ही नामु पाईऐ नाही नामु पाईऐ गुर बीचारा ॥ (पन्ना ७५४)

सत, संतोष, विचार के साथ इस पावन ग्रंथ रूपी थाल में आत्मिक जीवन देने वाला नाम डाला गया है, जिसका सहारा प्रत्येक जीव के लिए आवश्यक है। जो कोई भी इस अमृतमयी पावन नाम को हृदय में बसा लेगा, इस अमृतमयी भोजन को खाकर पचा लेगा अर्थात् पढ़-सुन कर अमल करेगा, उसका उद्धार होगा। साथ ही गुरु पातशाह ने स्पष्ट किया है:

एह वसतु तजी नह जाई नित नित रखु उरि धारो ॥ (पन्ना १४२९)

अर्थात् उपरोक्त तीनों वस्तुएं सत, संतोख, वीचार तथा आनंदमयी परमेश्वर का नाम इन शुभ गुणों को हृदय में धारण करना ही समूची मानवता के कल्याण का मार्ग है, क्योंकि यह सारा संसार मोह और माया के अंधेरे में केवल ठोकरें खा रहा है।

हमारा आचरण बिलकुल वैसा ही हो जैसे हम दिखाई देते हैं, पर वैसा नहीं है, इसलिए पंचम पातशाह ने सुखमनी साहिब में हिदायत दी है:

करतूति पसू की मानस जाति ॥
लोक पचारा करै दिनु राति ॥
बाहरि भेख अंतरि मलु माइआ ॥
छपसि नाहि कछु करै छपाइआ ॥
बाहरि गिआन धिआन इसनान ॥
अंतरि बिआपै लोभु सुआनु ॥ (पन्ना २६७)

अर्थात् कहलाता है मनुष्य, कर्म पशुओं

जैसे। बाहरी सुंदर वेश तथा मन माया की कलुषता से काला। बाहरी प्रयत्नों से अंदर की मैल छिपती नहीं है। यही नहीं, गुरु नानक साहिब जी की बाणी तो इंसान को यहां तक झंझोड़ती है:

जे रतु लगै कपड़ै जामा होइ पलीतु ॥
जो रतु पीवहि माणसा तिन किउ निरमलु चीतु ॥ (पन्ना १४०)

अर्थात् अगर कपड़े पर खून का धब्बा लग जाए तो उसे अपवित्र मान लिया जाता है और दूसरों का हक जबरदस्ती छीनने वालों, खून चूसने वालों का हृदय कैसे पवित्र हो सकता है? अर्थात् बाहरी दिखावे के लिए किया गया कोई भी धार्मिक कर्म तब तक सफल नहीं जब तक बंदे की नीयत में खोट है और यह खोटा सिक्का खरा बन सकता है अगर वो गुरु की संगत करे, सतसंग में आकर उस परमेश्वर की बंदगी करे। सतसंग में आकर जीव गुणों का ग्राहक बन जाता है, धीरे-धीरे अवगुण हृदय-स्थान को खाली कर जाते हैं, यथा :

ऊतम संगति ऊतमु होवै ॥
गुण कउ धावै अवगण धोवै ॥ (पन्ना ४१४)

यही नहीं संगत रूपी पारस साधारण जीव को भी खरा सोना बना देता है :

पारसु भेटि कंचनु धातु होई सतसंगति की वडिआई ॥ (पन्ना ५०५)

श्री गुरु रामदास जी ने संगत में आने से पूर्व तथा बाद की दशा का कितना हृदयग्राही भाव अभिव्यक्त किया है :

जो हमरी बिधि होती मेरे सतिगुरा
सा बिधि तुम हरि जाणहु आपे ॥
हम रुलते फिरते कोई बात न पूछता
गुर सतिगुर संगि कीरे हम थापे ॥
धंनु धंनु गुरू नानक जन केरा
जितु मिलिऐ चूके सभि सोग संतापे ॥
(पन्ना १६७)

श्री गुरु रामदास जी फरमान करते हैं कि गुरदेव की शरण एवं सेवा में आकर ऐसा प्रतीत होता है जैसे किसी कीड़े को बादशाही मिल गई हो। यही नहीं, गुरु की संगत पाकर समस्त दुख, दरिद्र, संताप, चिंताएं मिट जाते हैं।

जहां सतसंगत से आत्मिक उन्नति का सबब बनता है वहीं दूसरी ओर सामाजिक एकता, भाईचारा, धर्मनिरपेक्षता को भी बल मिलता है, जहां समस्त जातियों, धर्मों, वर्णों आदि के लोग एक साथ बैठ कर गुरु-उपदेश एवं हरि-यश श्रवण करते हैं :

तम संसारु चरन लगि तरीऐ सभु नानक ब्रहम पसारो ॥ (पन्ना १४२९)

अर्थात् सारा संसार अंधकारमयी है। ईश्वर के चरणों का ओट-आश्रय लेकर इस भवसागर से पार उतरा जा सकता है। पंचम पातशाह पावन फरमान करते हैं कि गुरु-चरणों की प्रीति की बदौलत गुरु-दर्शाए मार्ग पर चलते हुए मनुष्य को सर्वत्र में पारब्रह्म परमेश्वर के ही दीदार होते हैं।

वस्तुत: सच से अर्थात् ईश्वर-चरणों की प्रीति से संतोषी जीवन बनता है तथा संतोषी व्यक्ति ही उस प्रभु की रजा से हमेशा राजी रहता है और विवेक बुद्धि से सही और गलत की पहचान कर सदैव प्रभु-कृपा से सही मार्ग अपनाता है। यही नहीं, वो प्रत्येक प्राप्ति एवं गुण हेतु सहृदय से प्रभु का शुक्राना करता है--**'वाहिगुरु तेरा शुक्र है! वाहिगुरु तेरा शुक्र है!'** इस तरह उस प्रभु के रंग में रंगा हुआ जीव गुरु-उपदेश की कमाई करके सहजता से इस संसार रूपी भवसागर को पार कर जाता है।

विलक्षण इतिहास पुरुष : बाबा बंदा सिंघ बहादर

*–डॉ. महीप सिंघ**

तीन सौ वर्ष पूर्व, मई १७१० में बाबा बंदा सिंघ बहादर की सेनाओं ने सरहिंद के पास चपड़चिड़ी में, सरहिंद के सूबेदार वजीर खान की सेनाओं से युद्ध करके, मुगल सेनाओं को पराजित करके सरहिंद पर अपना अधिकार कर लिया था। आज सम्पूर्ण भारत में और विशेषत: पंजाब में इस फतह दिवस की तीसरी शताब्दी मनाई जा रही है। इस सम्बंध में अनेक समारोह आयोजित किए गए हैं।

बाबा बंदा सिंघ बहादर विलक्षण ऐतिहासिक पुरुष था। उसका जन्म कश्मीर के जिला पुंछ के राजौरी गांव में एक राजपूत कृषक परिवार में हुआ था। छोटी आयु में शिकार करते समय उसके बाण से एक गर्भिणी हिरणी की मृत्यु हो गई। हिरणी का जब पेट चीरा गया तो उसमें से हिरणी के दो बच्चे निकले जो जन्म लेते ही मर गये। यह दृश्य देखकर उसका मन विरक्ति से भर गया। उसने घर-बार त्याग दिया, साधु बन गया और देश-भ्रमण करने लगा। उसने अपना नाम माधोदास वैरागी रख लिया। अपनी यात्राओं में वह अनेक साधु-संतों के सम्पर्क में आया और घूमता-फिरता गोदावरी नदी के किनारे बसे नगर नांदेड़ (महाराष्ट्र) में डेरा स्थापित कर लिया। कुछ ही समय में चारों ओर उसकी प्रसिद्धि फैल गई। उसके सम्बंध में यह भी प्रचलित हो गया कि वह अनेक दैवी शक्तियों का स्वामी है।

इन्हीं दिनों श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी बादशाह बहादुर शाह से आगरा में मिले थे। दक्षिण (हैदराबाद) में उसके भाई कामबख्श ने उसके विरुद्ध विद्रोह करके अपने आप को सम्राट घोषित कर दिया था। उसके विद्रोह को दबाने के लिए वह दक्षिण की ओर चल दिया। उसने श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी को भी अपने साथ ले लिया। आगरा से पंजाब की संगत को लिखे एक पत्र में उन्होंने, 'कुछ खास बातचीत हो रही है', इस बात का उल्लेख किया था। इस बातचीत को किसी परिणति तक पहुंचाने के लिए वे बहादुर शाह के साथ दक्षिण की ओर चल दिए थे। इस समय उनके साथ लगभग ३०० सैनिक भालाधारी सवार थे। बुरहानपुर में कुछ समय व्यतीत करने के पश्चात नर्बदा नदी पार करके श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी तथा शाही सेना नांदेड़ तक आ गए। वहां से बहादुर शाह कामबख्श को नियंत्रित करने के लिए हैदराबाद चला गया। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी अपनी सैनिक टुकड़ी के साथ नांदेड़ में ही टिके रहे।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी माधोदास वैरागी के चमत्कारिक व्यक्तित्व के सम्बंध में पहले ही सुन चुके थे। वे उसके डेरे पर उससे मिलने के लिए गए। वहां दोनों के बीच जो संवाद हुआ उससे माधोदास वैरागी के जीवन की दिशा ही बदल गई। वह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के व्यक्तित्व से इतना प्रभावित हुआ कि उसने उनके सम्मुख करबद्ध होकर कहा, "महाराज, मैं आपका बंदा (शिष्य) हूं।"

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने उसके अंदर छिपी अनंत संभावनाओं और शक्तियों का

**एच-१०८, शिवाजी पार्क, नई दिल्ली-११००२६, मो : ९३१३९३२८८८*

आंकलन कर लिया था। उन्होंने उसे संसार-त्यागी-वैरागी की अपेक्षा देश पर आततायी शासकों द्वारा किए जा रहे अन्याय और अत्याचारों का सामना करने को प्रेरित किया। माधोदास वैरागी का रूपांतरण हो गया। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने उसे 'बंदा सिंघ' बनाकर उसे कृपाण, पांच बाण, पांच सिक्ख और उत्तर भारत की संगत के नाम हुकमनामों के साथ पंजाब की ओर भेज दिया।

सरहिंद का सूबेदार वजीर खान, जिसके आदेश से श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के दो छोटे सपुत्रों--साहिबजादा जोरावर सिंघ और साहिबजादा फतह सिंघ को दीवार में जिंदा चुनवा दिया गया था, बादशाह बहादुर शाह और श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के बढ़ते निकट सम्बंधों से बहुत आशंकित हो गया था। उसने भाड़े के हत्यारों को भेजकर नांदेड़ में, जब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी दोपहर के भोजन के पश्चात अपने शिविर में विश्राम कर रहे थे, उन पर तेज छुरे से आक्रमण कराया था, जिसके कारण कुछ समय बाद उनका देहावसान हो गया था।

दिल्ली के निकट पहुंचने तक बाबा बंदा सिंघ बहादर को लगभग एक वर्ष लग गया। सिक्ख क्षेत्रों में यह बात प्रचारित हो गई थी कि श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने बाबा बंदा सिंघ बहादर को उनका जत्थेदार (सेनानायक) बना कर भेजा है। उसके पास गुरु जी द्वारा प्रदत्त हुकमनामा (आदेश-पत्र) है, इसकी चर्चा भी लोगों के बीच फैल गई। देखते-देखते उसके चारों ओर सिक्ख एकत्र होने लगे और उसके पास एक छोटी-सी सेना बन गई। उसने दिल्ली में प्रवेश नहीं किया। पहला आक्रमण दिल्ली के निकट सोनीपत पर किया गया और बड़ी सरलता से उस पर अधिकार कर लिया। फिर उसने कैथल को अपने अधिकार में ले लिया। इन स्थानों पर उसने सरकारी खजानों को लूटकर उसे गरीब जनता तथा युद्ध सम्बंधी तैयारी के लिए अपने सैनिकों में वितरित कर दिया। बाबा बंदा सिंघ बहादर की ऐसी सफलता देखकर पंजाब के मालवा प्रदेश के अनेक सिक्ख किसान उसकी सेना में शामिल होने को आने लग गए।

बाबा बंदा सिंघ बहादर का अगला निशाना उस समय का समृद्ध नगर समाणा बना। उसे यह भी पता था कि दिल्ली के चांदनी चौक में नौंवे गुरु श्री गुरु तेग बहादर जी को शहीद करने वाला और श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के कनिष्ठ सपुत्रों को शहीद करने वाला जल्लाद इसी नगर में रहता है। इस नगर में मुगल सेनाओं की एक बड़ी छावनी थी, जिनके पास आधुनिक अस्त्र-शस्त्र भी थे। बाबा बंदा सिंघ बहादर के सैनिकों के पास परंपरागत तलवार, भाला, गंडासे जैसे शस्त्र थे। इन्हीं शस्त्रों के सहारे बाबा बंदा सिंघ बहादर की अप्रशिक्षित सेना ने समाणा में शत्रु को पराजित कर नगर पर अधिकार कर लिया। यहां से उसे घोड़े तथा आधुनिक अस्त्र-शस्त्र बड़ी मात्रा में मिले, जिससे उसकी सैन्य-शक्ति बहुत बढ़ गई।

बाबा बंदा सिंघ बहादर की ऐसी सफलताओं से सरहिंद में दहशत व्याप्त हो गई। सरहिंद मुगल साम्राज्य का बहुत महत्वपूर्ण सूबा था। उत्तर-पश्चिम की ओर से आने वाले सभी आक्रमणकारी जब अपनी विजय-यात्रा करते हुए सरहिंद तक पहुंच जाते थे तो समझते थे कि 'अब दिल्ली दूर नहीं' है।

बाबा बंदा सिंघ बहादर का लक्ष्य सरहिंद पर अधिकार करके वहां के सूबेदार वजीर खान को दंड देना था, जिसके हुक्म से श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के दो अबोध सपुत्रों को दीवार में चुनवाया गया था। वजीर खान ने अपनी रक्षा

के लिए दिल्ली की मुगल सत्ता से सहायता की याचना की, जो उसे प्राप्त भी हुई। सरहिंद से लगभग १२ कोस (२५ कि. मी.) दूर चपड़चिड़ी के मैदान में बाबा बंदा सिंघ बहादर की सेना से सरहिंद की सेना का भयंकर युद्ध हुआ। वजीर खान अपनी पूरी शक्ति के साथ मैदान में उतरा। इस युद्ध में मुगल सेना बुरी तरह पराजित हुई। वजीर खान और उसका एक पुत्र युद्ध में मारे गए। बाबा बंदा सिंघ बहादर ने सरहिंद पर अधिकार करके अपने एक विश्वस्थ साथी भाई बाज सिंघ को वहां का सूबेदार बना दिया।

चपड़चिड़ी का युद्ध १२ मई, १७१० के दिन हुआ था और विजेता के रूप में बाबा बंदा सिंघ बहादर और उसकी सेना ने १४ मई, १७१० के दिन सरहिंद नगर में प्रवेश किया था। आज इस घटना को घटित हुए पूरे तीन सौ वर्ष हो गए हैं।

आगे का इतिहास बहुत रोमांचक और रक्त-रंजित है। कुछ समय तक बाबा बंदा सिंघ बहादर और उसकी सेनाओं का विजय अभियान चलता रहा और रावी तथा यमुना के बीच का सारा प्रदेश उसके अधिकार में आ गया। नाहन (हिमाचल प्रदेश) के निकट एक किले मुखलिसगढ़ को लोहगढ़ नाम देकर बाबा बंदा सिंघ बहादर ने उसे अपनी राजधानी बना लिया और श्री गुरु नानक देव जी तथा श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के नाम से सिक्का भी चलाया।

लगभग ६ वर्ष तक पंजाब, हरियाणा और हिमाचल के अनेक हिस्सों पर बाबा बंदा सिंघ बहादर का शासन स्थापित रहा। मुगलों की विशाल सेना से उसका युद्ध निरंतर चलता रहता था। बहादुर शाह की मृत्यु के पश्चात उसका पुत्र जहांदार शाह गद्दी पर बैठा। फिर उसके भतीजे फरुख्सियर ने उसे अपदस्थ कर दिया और स्वयं को बादशाह घोषित कर दिया। फरुख्सियर ने अपनी पूरी शक्ति बाबा बंदा सिंघ बहादर के विद्रोह पर केंद्रित कर दी। १७१६ में गुरदास नंगल नामक स्थान पर बाबा बंदा सिंघ बहादर और उसके साथी घिर गए और विशाल मुगल सेना द्वारा बंदी बनाकर दिल्ली लाए गए। यहां सभी को बड़ी नृशंसतापूर्वक शहीद कर दिया गया।

बाबा बंदा सिंघ बहादर बड़े विलक्षण व्यक्तित्व का स्वामी था। वह नांदेड़ में एक वैरागी के रूप में जीवन जी रहा था। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी से प्रेरणा लेकर उसने तलवार उठाई और कुछ समय के लिए काबुल से दक्षिण भारत और गुजरात से असम तक फैली विशाल मुगल-शक्ति की जड़ें हिला दीं और इस भ्रम को तोड़ दिया कि यह शक्ति अजेय है।

बाबा बंदा सिंघ बहादर एक किसान का बेटा था। उसने मुगल जागीरदारी के विरुद्ध किसानों के विद्रोह को प्रोत्साहित किया। जिन क्षेत्रों पर उसका शासन स्थापित हुआ वहां से उसने जागीरदारी और जमींदारी-प्रथा को समाप्त कर दिया और यह घोषित कर दिया कि जो जमीन को जोतेगा वही जमीन का स्वामी होगा। यही कारण था कि बड़ी मात्रा में किसान उसकी सेना में शामिल होने लगे थे। किसानों के असंतोष को यदि किसी व्यक्ति ने पूरी तरह स्वर दिया तो वह संभवत: बाबा बंदा सिंघ बहादर ही था।

बाबा बंदा सिंघ बहादर के विजय अभियानों का ही परिणाम था कि दिल्ली की मुगल सलतनत निरंतर विघटित होती चली गई और पंजाब पर पहले अफगानों का शासन स्थापित हुआ, फिर सिक्खों का।

बाबा बंदा सिंघ बहादर की जीवन-सीढ़ियां

*-बीबी संतोश कौर**

कहा जाता है कि परिवर्तन प्रकृति का नियम है और यह परिवर्तन दुनिया की हरेक वस्तु में समय के साथ झलक देने लग जाता है। इस तथ्य को बहुत खोजों और तजुर्बों ने सिद्ध कर दिया है। जहां आज बहुत बड़े-बड़े पर्वत हैं वहां कभी समुद्र हुआ करते थे और समुद्रों में से निकले कई पदार्थ उनके भीतर के स्थानों पर पर्वत होने का प्रमाण देते हैं। फिर इंसानों में भी समय और परिस्थितियों के मुताबिक यही परिवर्तन आ जाता है।

यह परिवर्तन पश्चिमी कशमीर की रियासत पुंछ के गांव राजौरी में श्री रामदेव भारद्वाज के घर १६ अक्तूबर, १६७० को जन्मे बच्चे में जिसने कि जवानी की दहलीज पर एक शिकारी के रूप में पांव रखा था, घटित हुआ। इस बच्चे का नाम लछमण दास रखा गया था। पिता ने इस बच्चे को कृषि, शिकार खेलना, घुड़सवारी और शस्त्रों के प्रयोग में प्रशिक्षण दिया था।

युवा होने पर यह अपने मित्रों सहित शिकार खेलने जाने लगा और एक बहुत अच्छा शिकारी बन गया। एक दिन इसके तीर का शिकार एक गर्भवती हिरणी हो गई। उसके पेट में से दो बच्चे निकले जो इसकी आंखों के सामने तड़प-तड़प कर मर गए। यह देखकर इसके हृदय को गहरा आघात लगा। इसकी जीवन-रूपी धरती पर ऐसा परिवर्तन आया कि इस शिकारी ने शिकार की सीढ़ी से नीचे छलांग लगाई और सब कुछ त्याग कर साधु बन गया और साधु-संतों की संगत में रहने लगा।

एक बार कशमीर को जाते हुए साधुओं की एक टोली के साथ भेंट हुई जिस का मुखिया वैरागी साधु जानकी प्रसाद था। लछमण दास उसका चेला बन गया, उससे गुरु-दीक्षा ली, उसने लछमण दास को माधोदास बना दिया। जानकी प्रसाद के साथ तीर्थ-यात्राएं करते हुए माधोदास पंजाब पहुंच गया। यहां से वह वैसाखी के अवसर पर कसूर (आजकल पाकिस्तान में) पहुंच गया। फिर अन्य साधुओं की संगत की और विचरण करते हुए चैन फिर भी कहीं से न मिला। फिर इसका मिलाप रामदास वैरागी के साथ हुआ। रामदास की मंडली के साथ तीर्थ-यात्राएं करते हुए गोदावरी नदी के किनारे नासिक में पहुंच गया।

यहां पंचवटी नामक एक बहुत रमणीय स्थान था, जहां इसने अपना डेरा डाल लिया। अब इस वैरागी ने आगे वाली सीढ़ी पर पांव रखा। इसका मिलाप औघड़ नाथ नामक एक योगी के साथ हुआ। इस योगी के पास रिद्धियां-सिद्धियां और तांत्रिक विद्या बहुत थी। इसे अमूल्य विधि के रूप में देखते हुए माधोदास के हृदय में इसे लूट लेने का चाव उत्पन्न हो गया तथा यह इस योगी का शिष्य बन गया। अपने इस 'गुरु' की इसने अथाह सेवा की। इसकी सेवा स्वीकार हुई। इस सेवा पर बलिहार जाते हुए औघड़ नाथ ने योग के सभी छुपे रहस्यों, जादू-मंत्रों और रिद्धियों-सिद्धियों का 'खजाना' इसके सपुर्द कर दिया। माधोदास को एक 'अनूनियां' नामक ग्रंथ भी प्राप्त हुआ। कुछ

***७/२ रानी का बाग, नजदीक स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, श्री अमृतसर। मो : ९८१५६-४६३१७*

समय के बाद औघड़ नाथ की मृत्यु हो गई।

माधोदास ने पंचवटी का परित्याग कर दिया और नांदेड़ आकर डेरा डाल दिया। इसने यहां एक कुटिया बना ली और तप तथा योग कमाने लगा। यह यहां लोगों को रिद्धियों-सिद्धियों तथा तंत्रों-मंत्रों के चमत्कार दिखाने लगा। अपने डेरे पर आये साधुओं और यात्रियों की, अपनी शक्तियों के साथ खूब हंसी उड़ाता। अब तांत्रिक का आगामी सीढ़ी पर पांव रखने का सबब बन गया।

दशम पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी सिक्खी का प्रचार करते हुए नांदेड़ जा पहुंचे। यहां आप माधोदास के डेरे पर गए। माधोदास उस समय डेरे में नहीं था। गुरु जी सीधे इसके पलंग पर जाकर विराजमान हो गए। जब माधोदास डेरे पर आया तो गुरु जी को पलंग पर विराजमान पाया। वह गुरु जी को पहचान न सका और किसी 'अन्य व्यक्ति' को अपने पलंग पर बैठे देखकर गुस्से से लाल-पीला हो गया और लगा उन पर अपने जादू-मंत्र चलाने। परंतु सभी जादू-मंत्र फेल हो गए। पलंग उलटाने का प्रयास असफल हो गया। वह हैरान होकर रह गया। सोचा, मेरी शक्ति कहां उड़ गई? जब थक-हार गया तो उसका सिर नम्रता के साथ झुक गया। गुरु जी के चरणों पर गिर पड़ा। गुरु जी के साथ वार्तालाप हुआ। गुरु जी और माधोदास के बीच यह वार्तालाप हुआ :

माधोदास : (महाराज) आप कौन हो?
गुरु साहिब : वो, जिसको तू जानता है।
माधोदास : मैं क्या जानता हूं?
गुरु साहिब : अपने मन में अच्छी तरह सोच।
माधोदास : *(सोच कर)* आप गुरु गोबिंद सिंघ हैं?
गुरु साहिब : हां।
माधोदास : आप यहां किसलिए पधारे हो?
गुरु साहिब : मैं इसलिए आया हूं कि तुझे अपना 'सिंघ' सजाऊं।
माधोदास : मैं हाजिर हूं, हजूर। मैं आपका बंदा (गुलाम) हूं।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी और माधोदास के मिलाप के बारे में डॉ. गंडा सिंघ ने बहुत भाव भरे शब्दों में लिखा है, "उसमें शक्ति तथा हिम्मत विद्यमान थी परंतु वह कुमार्ग पर डाले हुए थे। कच्ची धातु की वह एक अथाह खान थीं, जो एक ऐसे रासायनी की प्रतीक्षा में थी जो उसको भट्ठी में गाल कर या कीमीआई दवाइयों के घोल सोने को मैल से अलग कर दे और उसको धो-मांज कर चमका दे। इसी प्रतीक्षा में उसके सोलह वर्ष नांदेड़ में गुजर गए। अंत में १७०८ ई की पत्तझड़ की ऋतु में एक शस्त्रधारी घुड़सवार, संत-सिपाही के रूप में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी वहां आ पहुंचे जिन्होंने इस वैरागी साधु की कुमार्ग पड़ी और व्यर्थ जा रही मानसिक और शारीरिक शक्तियों का रुख मोड़ कर पंथ खालसा के द्वारा उस जमाने की सताई हुई दुखी जनता की सेवा की तरफ लगा दिया। बाबा बंदा सिंघ बहादर का जीवन-परिवर्तन हो गया।

कहा जाता है कि जोश के साथ होश भी हो तो दुनिया की कोई भी चोटी विजय की जा सकती है। अत: गुरु जी अपने स्पर्श से कुमार्ग पर पड़े माधोदास को होश में लेकर आए और फिर अमृत छकाकर उसमें जोश भी भर दिया। होश और जोश के संयोग से माधोदास 'बंदा सिंघ बहादर' बन गया। नये जीवन का शुभारंभ हुआ। अब बहादुरी की सीढ़ियां चढ़ने का वक्त आ पहुंचा।

अमृत छकने के बाद बाबा बंदा सिंघ ने तन-मन-धन सब गुरु को सौंप दिया। गुरु जी से मुगल हकूमत के जुल्मों की व्यथा सुनी कि कैसे श्री गुरु अरजन देव जी की शहादत हुई,

कैसे औरंगजेब ने नवम गुरु श्री गुरु तेग बहादर जी को चांदनी चौक दिल्ली में शहीद कराया, छोटे साहिबजादों को कैसे यातनायें दे-देकर शहीद किया। यह सब कुछ सुनकर उसके रौंगटे खड़े हो गए, उसका खून खौल उठा और आंखों में उतर आया। उसने गुरु जी से अत्याचारियों को उनकी करतूतों के दंड देने के लिए आज्ञा मांगी, इसलिए कि उस अत्याचारी राज्य को जड़ से उखाड़ सके। गुरु जी ने ये विनतियां स्वीकार कीं और अपने पास बुलाकर 'बहादुरी' का थापड़ा दिया। अपने भत्थे में से पांच तीर दिये। सहायता तथा विचार-विमर्श के लिए पांच प्यारे--भाई बिनोद सिंघ, भाई काहन सिंघ, भाई बाज सिंघ, भाई दया सिंघ और भाई रण सिंघ तथा साथ ही एक निशान साहिब एवं एक नगाड़ा बख्शा। कुछ दिशायें दीं। पंजाब के सिक्खों के नाम हुक्मनामे देकर पंजाब की ओर रवाना कर दिया।

अब बाबा जी ने बहादुरी की सीढ़ी पर पांव रखने शुरू कर दिये। नांदेड़ को अलविदा कहकर सर्वप्रथम बांगड़ उपक्षेत्र में पहुंचे। यहां एक डाकुओं की टोली को मार डाला। लूट का माल वापस कराया। लोगों की सुरक्षा के लिए समर्थन देने का और उनको खालसा बनने का संदेश दिया। बाबा जी की सहायता के लिए हरेक ओर से सिंघ आने शुरू हो गए। बाबा जी ने पंजाब की भूगोलिक स्थिति का मूल्यांकन किया। जगह-जगह पर सिंघों ने तैयारियां शुरू कर दीं।

बाबा जी का सबसे बड़ा उद्देश्य सरहिंद को फतह करना था। आपने सरहिंद फतह करने से पूर्व मुगलों के छोटे-छोटे गढ़ खत्म करने की योजनाबंदी की। फिर सोनीपत पर आक्रमण किया। गांव भूणी में शाही खजाने के माल को छीन लिया। कैथल के हिंदू आमिल को ईन मनाई। ११ नवंबर, १७०८ को समाणा पर चारों ओर से आक्रमण बोल दिया। यहां जागीरदारों से दुखी किसान और अन्य लोग इनके साथ आ मिले। यह काफी धनाढ्य उपक्षेत्र था। श्री गुरु तेग बहादर जी को शहीद करने वाला जल्लाद जलालुद्दीन और छोटे साहिबजादों को शहीद करने वाले जल्लाद शासल बेग और बाशल बेग यहां के ही रहने वाले थे। इस उपक्षेत्र में खूब तलवार चलती रही और शवों के ढेर लग गए, खून की नदियां बल चलीं। समाणा के महल धवस्त हो गए। यह बाबा जी की प्रथम बड़ी विजय थी। इसके बाद घुड़ाम और फिर मुसतफाबाद की विजय प्राप्त की। इस शूरवीर के हौंसले और अधिक बुलंद होते गए; जिधर भी जाता विजय इसके पांव चूमती।

कपूरी की विजय स्त्रियों पर होते जुल्म तथा अपराध के विरुद्ध थी। कपूरी का फौजदार कदमुद्दीन अक्सर ही स्त्रियों की इज्जत लूट लेता। जब इसके बारे में शिकायतें बाबा जी के पास पहुंचीं तो उन्होंने लुबाणों के गांव रात व्यतीत की। दिन चढ़ते ही ऐसा आक्रमण किया कि जो भी आगे आया मारा गया। कदमुद्दीन की हवेली जला दी गई।

इसके पश्चात अब सिंघों का निशाना था सढौरा। यहां का हाकिम बहुत जालिम था। यहां हिंदुओं के घरों के सामने गायें कत्ल की जाती थीं। लोग अपने त्योहार नहीं मना सकते थे। यह सढौरा का ही हाकिम था जिसने श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की सहायता करने के बदले पीर बुद्धू शाह को दंड दिलाया था, पीर जी को यातनायें देकर शहीद किया गया था। बाबा जी की सिक्ख सेनाओं ने यहां के दुर्ग को तहस-नहस कर दिया।

रोपड़ के स्थान पर एक बहुत भीषण युद्ध

हुआ। बाबा जी की कमान तले सिंघों ने यहां शेर मुहम्मद की सेनाओं के साथ सख्त लड़ाई लड़ी। इसमें खिजर खां तथा उसके दोनों भतीजे नुसरत खां और वली मुहम्मद मारे गए।

अब शूरवीर सिंघ बाबा जी की कमान तले शेरों की भांति सरहिंद के हाकिम वजीर खां से छोटे साहिबजादों और माता गुजरी जी की शहादतों का बदला लेने के लिए आगे बढ़े। 'सति श्री अकाल' के जयघोष बुलाते हुए बाबा बंदा सिंघ बहादर ने सरहिंद पर चढ़ाई का हुक्म दे दिया। दूसरी ओर वजीर खान, जो भीतर से तो कांप रहा था परंतु ऊपर से उसने इस्लामी जिहाद का ऐलान कर दिया, ने हरेक प्रकार की युद्ध-सामग्री बहुत बड़ी मात्रा में एकत्र कर ली हुई थी। दूसरी ओर बाबा जी के पास न हाथी थे न ही तोपखाना। इधर तो घोड़े भी पूरे न थे। चपड़चिड़ी के मैदान में दोनों सेनाओं का सामना हुआ तो सिंघों ने हाथियों और तोपखाने को भी अपनी निर्भीकता तथा जांनिसारी से प्रभावहीन कर दिया। यह युद्ध आन-शान से जीता गया। वजीर खान मारा गया। यह १२ मई, १७१६ को हुआ।

१३ मई को शहीदों का संस्कार करके १४ मई को सरहिंद में प्रवेश किया। यहां का किला बहुत मजबूत था, परंतु सिंघों के इरादे असीम रूप में बुलंद थे। सरहिंद में दाखिल होना सिंघों के लिए गर्व करने योग्य ऐतिहासिक समय बन गया। उनकी स्मृति में छोटे साहिबजादे और माता गुजरी जी की शहादतें बसी हुई थीं। उन्होंने दोषियों को चुन-चुन कर दंडित किया। वजीर खान को, छोटे साहिबजादों को शहीद करने के लिए उकसाने वाले अत्यंत दुष्ट तथा नीच सुच्चा नंद के नाक में छेद करके नकेल डाली गई और उसको भालू की भांति तब तक गली-गली घुमाया जब तक लोगों से जूतों की मार खा-खाकर उसकी मृत्यु न हो गई।

इस विजय के बाद बाबा जी ने आदर्श सिक्ख राज की नींव रखी। आपने भूमि सुधार लाते हुए जमींदारी प्रणाली समाप्त करते हुए भूमि भू-वाहकों को सौंप दी। आपने जात-पात और नस्ल-धर्म आदि के बंधन तोड़ कर नीच कहलवाने वाली जातियों के लोगों को ऊंचे पदों पर नियुक्त किया। आपने नशेखोरी पर प्रतिबंध लगाया। आप धर्म-निरपेक्ष तथा न्यायकारी थे। आपके राज तथा राज-दरबार में सभी धर्मों के लोगों का सम्मान-सत्कार किया जाता था। बाबा जी स्वयं ऊंचे व निर्मल आचरण वाले थे। वे सिदकी अमृतधारी सिंघ थे जिन्होंने सिक्खी धर्म को केशों-श्वासों सहित निभाया।

जब बाबा जी का अंतिम समय अत्यंत सख्त आया तो आपने धैर्य और साहस का बहुत ऊंचा रूप दर्शाया। वस्तुतः दुनिया की कोई चीज भी स्थिर नहीं है। जो उपजा है उसने बिनस जाना होता है। हरेक चीज का दृष्टमान रूप में अंत होता है। परंतु सिदकी शहीद, शहीद होकर इतिहास के पन्नों और लोगों के दिलों में बस कर अमर हो जाते हैं। अब यह अद्वितीय योद्धा शहीदी का जाम पीकर अद्वितीय धैर्य दिखाते हुए शहादत की सीढ़ी चढ़ गया। कौन-सी आंख है जो इनकी शहीदी का वृत्तांत सुन कर नम नहीं होती? आप जी को आपके साथी सिंघों सहित लम्बी घेराबंदी के बाद गुरदास नंगल की गढ़ी अथवा दुनी चंद की हवेली से कैद किया गया। बाबा जी तथा उनके साथी सिंघों को एक जलूस की शक्ल में दिल्ली ले जाया गया। बाबा जी को लोहे के पिंजरे में बंद करके हाथी पर चढ़ाया हुआ था। वस्तुतः मुगल अधिकारी भीतर से अभी भी इस जांनिसार योद्धा से खौफजदा थे।

बाबा जी के साथी सिंघों को शहीद करने

के बाद इनको शहीद करने से पूर्व ईन मनाने का हर संभव यत्न किया गया। आपको सिक्ख धर्म छोड़कर इस्लाम अपना कर जान बचाने की पेशकश की गई। इंकार करने पर आपके मात्र ४ वर्ष के सपुत्र भाई अजै सिंघ के शरीर के टुकड़े-टुकड़े कर दिये गए। उसका तड़पता कलेजा बाबा जी के मुंह में ठूसने जैसी अत्यंत नीच हरकत की गई। बाबा जी फिर भी अडोल रहे। शहीदी समय के वृत्तांत का एक हिस्सा विशेषत: उल्लेखनीय है। कहा जाता है कि इहतमाद दौला मुहम्मद असीन खान ने बाबा जी के चेहरे को देखा। चेहरे पर प्रभुत्ता तथा जलाल देखकर वह हैरान रह गया। उसने कहा, "बहुत हैरानी की बात है कि वह मनुष्य जिसके चेहरे से इतना ज्ञान प्रतीत होता हो, जिसके आचरण में इतनी उच्चाई हो, ऐसे बुरे कर्मो का दोषी हो जो उसने मुगल हकूमत के विरुद्ध किये हों।" बाबा जी ने निर्भीकता और धैर्य के साथ यह उत्तर दिया, "जब तेरे जैसे मनुष्य पापी और दुष्ट हो जाएं, न्याय का रास्ता छोड़ दें तो वह रब मेरे जैसे बंदे को पैदा करता है ताकि दुष्टों का संहार हो सके। अब भी रब जो कर रहा है ठीक ही कर रहा है।"

बाबा जी को अकथनीय कष्ट देकर शहीद किया गया। जल्लाद ने पहले छुरे के साथ उनकी दायीं आंख निकाली और फिर बायीं। फिर बायां पांव काट दिया तथा फिर दोनों हाथ काट दिये। फिर आग में लाल किये गर्म लोहे के चिमटों के साथ बाबा जी के शरीर से मांस की बोटियां खींच-खींच कर तोड़ी गईं। शरीर के बंद-बंद काट दिये और अंत में सिर काट दिया। इस प्रकार असहनीय कष्ट सहन् करते हुए बाबा जी अद्वितीय शहादत की सीढ़ी पर चढ़ गए। बाबा जी का नाम रहती दुनिया तक श्रद्धा, प्यार तथा सत्कार के साथ लिया जाता रहेगा। आप सिक्ख पंथ के महान शहीद हैं। आप बेमिसाल योद्धा हैं। हम सिक्खों को ही नहीं सभी देशवासियों को भी बाबा बंदा सिंघ बहादर के प्रति ऊंचा सत्कार रखना चाहिए।

कविता

जिसने जीवन दिया . . .

आओ, बेटा! मिलकर हम पाठ करें!
जिसने जीवन दिया उसको याद करें!
प्रभु-सिमरन से जीवन हो सफल जाता है,
उसकी कृपा से हृदय-कमल खिल जाता है,
हरा-भरा जीवन का यह उद्यान करें!
जिसने जीवन दिया उसको याद करें!
आओ, अकाल पुरख की गुरबाणी गाएं,
सच्चे अकाल पुरख की खुशियां पाएं,
उसके प्रेम के अमृत का रस-पान करें!
जिसने जीवन दिया उसको याद करें!
खत्म होते-होते जीवन खत्म हो जाता है,
अंत यह भौतिक शरीर भस्म हो जाता है,
आओ, श्वास-श्वास उसका गुणगान करें!
जिसने जीवन दिया उसको याद करें!
बार-बार मानव-जीवन नहीं मिलता,
उसके हुक्म बिना एक पत्ता नहीं हिलता,
हाथ जोड़, शीश निवाकर धन्यवाद करें!
जिसने जीवन दिया उसको याद करें!
हमारा हर अच्छा संस्कार न भूलना,
हमारा स्नेह, ममत्त्व, प्यार न भूलना,
सामर्थ्य अनुसार भले का हर काम करें!
जिसने जीवन दिया उसको याद करें!
आओ, बेटा! मिलकर हम पाठ करें!
गुरबाणी का जाप करें, नित्य जाप करें!

-डॉ कशमीर सिंघ 'नूर', बी-एक्स ९२५, मोहल्ला संतोखपुरा, होशियारपुर रोड, जलंधर।

गौरवशाली शहीदी परंपरा

*-डॉ. निर्मल कौशिक**

समाज और देश के लिए अपना जीवन-दान आत्म-बलिदान देने वाले का सम्मान करना हमारा कौमी कर्त्तव्य है। युद्ध में लड़ते हुए वीरगति को प्राप्त होने वाले वीरों को सम्मानित करने की प्रथा एक अच्छी परंपरा है।

मानव एक संवेदनशील प्राणी है। दूसरों को अपने ही समान समझने वाला मनुष्य महामानव हो जाता है। लोग उसे सम्मान की दृष्टि से देखते हैं। सज्जनों का सर्वस्व (ऐश्वर्य) परोपकार के लिए होता है। पर-पीड़ा को अपने अंदर आत्मसात कर उसे दूर करने की क्षमता उनमें स्वत: ही आ जाती है। विनम्रता, मधुरता, तप, त्याग, संयम, ज्ञान, ध्यान और दान जैसे गुणों से अलंकृत ऐसे महामानव मानव-कल्याण हेतु आत्म-बलिदान तक देने में भी संकोच नहीं करते। उनका तन, मन और धन देश, कौम और समाज के कल्याणार्थ सदैव समर्पित होता है।

हमारी संस्कृति में मानवीय गुणों की अवधारणा करने पर ही मानव-जीवन को सार्थक माना गया है। इसमें विद्या, तप, दान, ज्ञान, शील, धर्म आदि गुणों से विहीन मनुष्य पृथ्वी पर भार स्वरूप माना जाता है।

अपने अंदर सद्गुणों को विकसित कर मानव साधारण से विशेष हो जाता है। वह सुख-दुख, लाभ-हानि, यश-अपयश, निन्दा-स्तुति, मान-अपमान को एक समान समझने लगता है। उसमें ब्रह्मज्ञानी के लक्षण परिलक्षित होने लगते हैं। ऐसे उदार पुरुष को, जो पर-पीड़ा को दिल से अनुभव करता हो, सही अर्थों में 'संत' कहा जा सकता है।

संतों का हृदय तो मक्खन से भी कोमल होता है। मक्खन स्वयं को ताप लगने से पिघलता है जबकि संतों का हृदय दूसरों को ताप लगने से ही पिघल जाता है। ऐसे संत पुरुष को उसके अंदर विद्यमान संतोष, सहनशीलता और दृढ संकल्प-शक्ति, उसके आत्मबल और आत्म-विश्वास को और अधिक दृढ़ता प्रदान करते हैं। जब मानव आत्मज्ञानी होकर, मानवता की सेवा के लिए तत्पर होकर अपने अंदर एक आलौकिक शक्ति का आभास कर लेता है तो उसके अंदर निर्लेप, निरवैर और निर्भय होने की क्षमता स्वत: आ जाती है। वह मानव कल्याणार्थ कुछ भी (असंभव) करने में सक्षम हो जाता है।

'शहीद' अरबी भाषा का शब्द है। 'शहीद' से ही 'शहादत' बना है अर्थात् कुर्बानी देना या अपने आप को कुर्बान करना। मुस्लिम संस्कृति के ये शब्द पंजाबी भाषा में इस प्रकार आत्मसात कर लिए गए कि अब ये पंजाबी संस्कृति को ही मुखरित करने लगे हैं, लेकिन पंजाब में 'शहीद' और 'शहादत' अपने अलग परिप्रेक्ष्य में प्रयुक्त हुए हैं इस्लामिक परंपरा और मुस्लिम संस्कृति के सन्दर्भ में नहीं। भारतीय संस्कृति के परिप्रेक्ष्य में 'शहीद' अपनी अन्तरात्मा सहित उस 'ब्रह्म ज्योति' में तद्रूप हो जाता है। वह अपनी पवित्रता से सम्पूर्ण जगत अथवा

**अध्यक्ष, हिंदी विभाग, सरकारी बृजेन्द्रा कालेज, फरीदकोट।*

परिवेश को सुगंधित व शहादत देते समय अपनी शक्ति अथवा चमत्कार का प्रदर्शन नहीं करता। वह शांतचित्त रहते हुए, ईश्वर का स्मरण कर उसका ध्यान करते हुए, सहज और अडिग रहकर ईश्वरीय सत्ता का निर्णय स्वीकार कर *'तेरा कीआ मीठा लागै'* कहते हुए उस ज्योति स्वरूप ब्रह्म में लीन होकर निर्भय-पद को प्राप्त करता है।

पंजाब की पावन धरती, साहित्य, संस्कृति और संघर्ष के लिए विश्व भर में प्रसिद्ध है। उत्तर भारत की ओर से विदेशी आक्रमणकारियों के कदमों से आक्रांत पंजाब की धरती ने शताब्दियों तक अमानवीय अत्याचारों को अपनी भुजाबल से रोकने का भरसक प्रयास किया। इसके लिए अनेक वर्षों तक यहां खून की नदियां बहती रहीं। धर्म और आस्था के पुजारी अपनी आध्यात्मिक शक्ति से तथा वीर योद्धा अपने भुजाबल से शत्रुओं से लोहा लेते रहे। इतना ही नहीं इस उपजाऊ भूमि ने जहां एक ओर अनाज उगाया वहीं दूसरी तरफ शहीदों की भी कमी नहीं आने दी। सिक्ख इतिहास इस बात का साक्षी है कि उन्होंने सदैव अत्याचार को रोकने के लिए अपने सिरों की भी परवाह नहीं की। तत्कालीन अत्याचारों की पराकाष्ठा का चित्रण श्री गुरु नानक देव जी की पावन बाणी में देखा जा सकता है जिसमें उन्होंने ईश्वर को उपालंभ देते हुए कहा था :

खुरासान खसमाना कीआ हिंदुसतानु डराइआ ॥
आपै दोसु न देई करता जमु करि मुगलु चड़ाइआ ॥
एती मार पई करलाणे तैं की दरदु न आइआ ॥
करता तूं सभना का सोई ॥
जे सकता सकते कउ मारे ता मनि रोसु न होई ॥ (पन्ना ३६०)

श्री गुरु नानक देव जी ने तत्कालीन परिस्थितियों काा चित्रण करते समय अपनी बाणी में यथार्थ में कहीं भी कटौती नहीं की। शासन के अत्याचार की चरम सीमा, दस गुरु साहिबान के जीवन का कठोर संघर्ष, बलिदान की लासानी परंपरा, अपने देश, कौम, संस्कृति और धर्म की सुरक्षा ही नहीं, अस्तित्व का प्रश्न शत्रु की हर चुनौती का मुंहतोड़ जवाब नहीं तो और क्या है! सिक्ख धर्म में अत्याचार को रोकने के लिए अगर शहादत भी देनी पड़े तो सच्चा सिक्ख पीछे नहीं हटता। सिक्ख परंपरा के अनुसार अरदास में इस गौरवमयी शहादत देने वालों को आदर और सम्मान सहित स्मरण किया जाता है और उनका ध्यान करने की परंपरा सहित वाहिगुरु को याद करने की प्रेरणा प्रदान की जाती है। इस अरदास की शब्दावली इस प्रकार है :

"पांच प्यारों, चार साहिबजादों, चालीस मुक्तों, हठी, जपी, तपियों जिन्हों ने नाम जपा, बांट खाया, देग चलाई, तेग वाही, देख कर अनडिठ किया, उन प्रेमी सत्यवादियों की पवित्र कमाई का धिआन धर के खालसा जी! बोलो जी वाहिगुरू! जिन सिंघ सिंघनियों ने धर्म पर बलिदान दिये, अंग अंग कटवाए, सिर की खोपड़ियां उतरवाईं, चर्खियों पर चढ़ाए गये, आरों से तन चिरवाए, गुरद्वारों के सुधार और पवित्रता के निमित्त शहीद हुए, धर्म नहीं छोड़ा, सिक्ख धर्म का केशों तथा प्राणों सहित पालन किया, उनकी किरत कमाई का धिआन धर के खालसा जी! बोलो वाहिगुरु!'

इस अरदास से सिक्ख इतिहास के बलिदान की विश्व-परंपरा का ज्ञान होता है। इसी परंपरा ने अत्याचार से जूझने की शक्ति अर्जित की और अंततः श्री गुरु तेग बहादर जी के

बलिदान ने भारतीय इतिहास में एक नया अध्याय जोड़ दिया। उनके साथ शहीद होने वाले उनके अनन्य सेवक भाई मतीदास जी, भाई सतीदास जी और भाई दिआला जी ने नवम गुरु के आशीर्वाद, नाम-स्मरण की शक्ति और आध्यात्मिक सक्षमता का जो पुष्ट प्रमाण दिया उसकी विश्व भर में कोई दूसरी मिसाल नहीं मिलती। सिक्ख-परंपरा में बलिदान के विलक्षण उदाहरण, बचपन में ही मासूम बच्चों के शहीद होने की गौरव गाथाएं विश्व भर के लोगों को बिना रंग-भेद, जाति, नस्ल और कौम के अंतर को नत्मस्तक होने को विवश कर देती हैं। इसी भावना के वशीभूत राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने हिन्दी की सुप्रसिद्ध रचना 'भारत-भारती' में अपनी श्रद्धांजलि इन शब्दों में अर्पित की है :

जिस कुल जात कौम के बच्चे, दे सकते हैं यूं बलिदान,
उसका वर्तमान कुछ भी हो, लेकिन भविष्य है महा महान।

सदियों से सिक्ख इतिहास ऐसी गौरव-गाथाओं से अपने को समृद्ध करता चला आ रहा है। हमारी संस्कृति के संरक्षण हेतु संघर्ष करने वाले गुरु-घर के अनन्य सेवक भाई सतीदास जी, भाई मतीदास जी और भाई दिआला जी के बलिदान को भारतीय कभी भुला नहीं सकेंगे। रौंगटे खड़े कर देने वाली उनकी शहादत के प्रति हम सब नत्मस्तक हैं। हम सब उन्हें श्रद्धा सहित स्मरण करने में गौरव अनुभव करते हैं।

आपका पत्र मिला
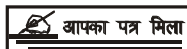
गुरमुखी लिपि सीखने को प्रेरित किया

जून माह में 'गुरमति ज्ञान' प्राप्त पत्रिका सिक्ख धर्म के 'शहीद बाबा बंदा सिंघ बहादर' के शौर्य व ज्ञान से परिपूर्ण थी। सभी लेख रोचक, ज्ञानवर्धक और सिक्ख धर्म के गुरु साहिबान की शिक्षाओं से ओत-प्रोत शोध छात्राओं व छात्रों के लिए उपयोगी सिद्ध होंगे ऐसा मेरा विचार है। सिक्ख धर्म के प्रचार-प्रसार में लगे सभी लेखकों को साधुवाद।

गुरमति प्रकाश (पंजाबी) मई व जून २०१० 'बाबा सिंघ बहादर', '३०० साला सरहिंद फतह दिवस' को समर्पित अंक प्राप्त हुआ। धन्यवाद! 'गुरमुखी लिपि' में प्राप्त पत्रिका को पढ़ने में काफी कठिनाई हुई। मैं 'गुरमुखी लिपि' में पढ़ना नहीं जानती हूं। फिर भी पढ़ने के लिए प्रयास किया है। 'गुरमुखी लिपि' का एक कायदा (प्रारंभिक अक्षर ज्ञान) लाकर पढ़ना शुरू किया। धीरे-धीरे ज्ञान हो जायेगा। इसके लिए आपको धन्यवाद, क्योंकि मुझे एक नई लिपि को सीखने के लिए 'गुरमति प्रकाश' पत्रिका ने प्रेरित किया।

-डॉ. अरुण रानी, सहारनपुर।

इतिहास का ज्ञान होना बहुत जरूरी है

'गुरमति ज्ञान' का अप्रैल २०१० का अंक मिला। श्री राम सहाय वर्मा का लेख 'विस्मादी प्रदेश पंजाब', बीबा जसप्रीत कौर 'जस्सी' की कविता 'आत्मा की पुकार' अच्छी लगी। 'गुरमति ज्ञान' आध्यात्म के साथ इतिहास का ज्ञान भी कराती है जो आज हम भूल गए हैं, भूलते जा रहे हैं। आदमी को अपने इतिहास का ज्ञान होना बहुत जरूरी है। यदि हमारा इतिहास खत्म हो गया तो सब कुछ समाप्त हो जाएगा। पत्रिका में शहीद गुरु साहिबान का इतिहास पढ़ने से हमें प्रेरणा और गर्व का अनुभव होता है।

-माता प्रसाद शुक्ल, ग्वालियर।

अरदास : क्यों और कैसे करें?

-भाई किरपाल सिंघ*

हम बारिक तूं गुरु पिता है : कुछ लोग अक्सर यह कहते हैं कि जब परमात्मा हमारे भीतरी भेदों का ज्ञाता है तो फिर अरदास की आवश्यकता क्यों? कुछ लोगों का ख्याल है कि परमात्मा ने कुछ सौगातें केवल मांगने पर ही देनी हैं। हम कई बार भोलेपन में कुछ ऐसी भी वस्तुओं की मांग करते हैं जो हमारे लिए घातक सिद्ध होती हैं तथा हमें गलती के लिए बाद में पछताना पड़ता है। कई लोग इसमें विश्वास रखते हैं कि परमात्मा हमारे सांसारिक पिता से बड़ा होने के कारण अपने बच्चों को बिना मांगे केवल वही चीजें देते हैं जो उनके लिए ठीक हों और वे नहीं देते जो हानिकारक हों। इन सारी दलीलों के बावजूद संत-जन अरदास पर जोर देते हैं। इसमें कोई शक नहीं कि परमात्मा आपकी आवश्यकताओं से परिचित है :

वडी वडिआई बुझै सभि भाउ ॥ (पन्ना ४६३)

तथा :

वडी वडिआई जाणै आलाउ ॥ (पन्ना ४६३)

अर्थात् उसकी महानता उसके सर्व-ज्ञाता होने में है :

घट घट के अंतर की जानत ॥
भले बुरे की पीर पछानत ॥ (चौपई)

अर्थात् परमात्मा इंसान के अंदर की बात को जानते हुए उसके भले-बुरे को भी जानता है। अरदास का उद्देश्य यह है कि हम अपनी आवश्यकताओं से परिचित हों तथा उनकी प्राप्ति के पश्चात हमें शुक्रगुजार होना चाहिए।

हम बारिक तूं गुरु पिता है दे मति समझाए ॥
(पन्ना ४५०)

हे गुरु! हम तेरे बच्चे हैं, इसलिए हमें सच्ची-शुद्ध समझ प्रदान कर।

हम बारिक मुगध इआन पिता समझावहिगे ॥
(पन्ना १३२१)

कई बार हमें यह महसूस होता है कि अरदास से हमारे दुखों की निवृत्ति नहीं होती, लेकिन इससे हमें उनको सहने की एवं उनके साथ लड़ने की शक्ति मिलती है, जिससे ये दुख दुखदाई नहीं होते।

दुइ करि जोरि करउ अरदासि

मनुष्य का दिल अरदास का केन्द्र-बिन्दु है, इसलिए अरदास करने से पहले यह पूर्ण रूप में साफ होना चाहिए। शुद्ध हृदय में प्रभु के लिए आदर एवं नम्रता का भाव होना चाहिए तथा इस चिंता से दूर कि दुनिया इस सम्बंध में हमें क्या समझेगी :

आपे जाणै करे आपि आपे आणै रासि ॥
तिसै अगै नानका खलिइ कीचै अरदासि ॥
(पन्ना १०९३)

अर्थात् परमात्मा सब कुछ जानता है और अपने आप ही सारे कामों को पूर्ण करने में समर्थ है। इसलिए हमें नम्रता से अरदास करते हुए उसके सामने खड़े हो जाना चाहिए। श्री गुरु अरजन देव जी का फरमान है :

दुइ करि जोरि करउ अरदासि ॥ (पन्ना ११५२)

नीचा और निमाणा होने के साथ-साथ परमात्मा में विश्वास तथा भरोसा दोनों का सुमेल होना चहिए। इससे आगे हमें अपने मन को दिमाग में उठती तरंगों से हटा कर स्थिर करने की आवश्यकता है। मन की इस स्थिरता

*२२१, सेक्टर-१८, पंचकूला (हरियाणा)

की प्राप्ति के लिए हमें किसी ऐसे केंद्र या पोल (स्तंभ) की जरूरत है जहां इस मन के बार-बार जाने पर इसे अपनी इच्छानुसार स्थिर किया जा सके। जब तक ऐसा कोई केंद्र-बिंदु हमें नहीं मिलता तब तक एक श्रद्धालु अस्थिर स्थिति में रहता है। जब वह अपने बाहरी संसार तथा उससे सम्बंधित वस्तुओं से अपना नाता तोड़ लेता है और एक नई दुनिया में कदम रखने के लिए इंतजार करता है तो उस समय उसके अचेतन मन की गहराइयों में दबे कई विचार उसे घेर लेते हैं। इन झंझटों से व्यक्ति अपने दृढ़ इरादे या परमात्मा की भीतरी शक्ति 'अरदास' का सहारा लेते हुए छुटकारा पा सकता है। इन सारी समस्याओं पर काबू पाने का सबसे आसान और विश्वसनीय ढंग यह है कि हम सतिगुरु के स्वरूप के बारे में सोचें और उसका ध्यान करें। इस तरह रोजाना अपने अंदर जाकर अभ्यास करने से एवं दस्तक देने से भीतरी मार्गों के दरवाजे खुल जाते हैं तथा हमें कई रूहानी नजारे देखने को मिलते हैं और रूहानी संगीत (नाद) की तरंगें मिलती हैं।

कभी-कभी श्रद्धालु को अपनी अरदास का फल प्राप्त नहीं होता तो वह उसकी गुणवत्ता पर शक करने लग पड़ता है और वह परमात्मा से अलग रह जाता है तथा वह अपने आप को एक बड़ी एवं अद्भुत स्थिरता में पाता है और अपनी ही तरंगों का एहसास करता है। कुछ लोग आंखों के पीछे अंधेरे में फंस जाते हैं तथा अगंम में दाखिल नहीं हो सकते। अंधकार के ये भाग इतने कालिमामयी, उलझन भरे और सुन्न हैं कि आदमी अपने आप को भटका हुआ महसूस करता है। इस सबके बावजूद वह बार-बार कई ढंगों से मंतव्य-पूर्ति के लिए कोशिशें करता है, लेकिन फिर फिसल जाता है। यह स्थिति वास्तव में बहुत ही दुखदाई एवं नाजुक है। सहारे के बिना वह अपने बलबूते से इन मुश्किलों से बाहर नहीं निकल सकता। ऐसे भयंकर और डरावने माहौल में केवल सतिगुरु का मार्गदर्शन ही लाभदायक हो सकता है। शक्ति भरे हाथ से ही कोई जीव भीतरी राहों में इन रुकावटों पर जीत प्राप्त कर सकता है।

अरदास की तीन किस्में

१. ज़ुबानी या जप द्वारा

इसमें अरदास ज़ुबान या मुंह के वाक्यों के साथ की जाती है। इसमें कुछ ऐसी अरदासें दोहरायी जाती हैं जो धर्म-ग्रंथों में दर्ज हैं या कुछ महात्माओं द्वारा नमूने के रूप में दी गई हैं। कुछ महसूस करते हैं कि इन अरदासों के सही परिणाम नहीं मिलते। अरदास केवल विशेष शब्दों का बार-बार दोहराव ही नहीं बल्कि यह तो रूह की गहराइयों में से आने वाली एक दर्दनाक पुकार है। ऐसी ज़ुबानी अरदासों की तुलना उन कपड़ों से की जा सकती है जो मांगने वालों के आम तौर पर पूरे नहीं आते। अरदास के ये नमूने बहुत कीमती हैं और हमें ऐसी भावपूर्ण अरदासें अपने मन की गहराइयों में से करनी चाहिए, जो हमारी भावना एवं जज़बों का प्रतीक हों।

२. बौद्धिक अरदास

यह अरदास ऐसी है जो कि ख्यालों की ज़ुबान से ही दोहराई जाती है। यह केवल तब ही संभव होती है जब कोई व्यक्ति उसके लिए अपने अंदर ही सही आधार बना ले। इंसान को परमात्मा के अस्तित्व को महसूस करते हुए अपने ख्याल को एकाग्र करके अरदास से पूर्व उसका धन्यवाद करना चाहिए तथा अपनी कमजोरियों को परमात्मा के आगे मानते हुए मन्तव्यों की पूर्ति के लिए उसकी मदद हेतु अरदास करनी चाहिए। यह भी अपने आप में एक कला है, जैसे संगीत तथा चित्रकला सीखने वालों को सब्र और संतोष की आवश्यकता होती है इस कला में भी उसी तरह ही सब्र-संतोष की

जरूरत है। मन को इस कला में निपुण करने के लिए सतिगुरु के ख्यालों की उसी तरह आवश्यकता पड़ती है जैसे एक महावत को हाथी को अपने नियंत्रण में करने के लिए अंकुश की आवश्यकता पड़ती है। अरदास करने के पश्चात हमें उसके आशीर्वाद तथा रहमत का आनंद लेना चाहिए। इसके साथ ही ऐसी शांति आती है जो सिर से पैरों तक आनंदित कर देती है। यदि किसी को इसका स्वाद आ जाए तो वह अंदर सम्पूर्ण संतुष्टि अनुभव करता है। इस संसार का मोह एवं अद्भुत नजारे एक बीते समय की तरह तथा नकारा हुए की तरह भूल जाते हैं। संसार में रहते हुए भी वह जीव संसार का नहीं रहता। यह कितना अद्भुत नजारा होगा? कुछ लोग इसे ही परमार्थ का सब कुछ और अंत समझ लेते हैं, लेकिन यह उचित नहीं है। यह परिवर्तन प्रकाशमयी सतिगुरु तथा उसके बाद और बहुत कुछ के आगमन का प्रतीक ही है।

३. आध्यात्मिक

सच्ची रूहानियत के लिए एक साधक को बहुत इंतजार करना पड़ता है। इस प्रकार जब वह साधना करता है तो कई बार वह अपने इस स्थूल शरीर को छोड़कर सतिगुरु के नूरी स्वरूप के दर्शन करता है। इससे आगे असंख्य आलौकिक रूहानी नजारे भीतरी आंख के आगे खुलते चले जाते हैं। इनका व्याख्यान नहीं किया जा सकता। इस संसार में रहते हुए वह ऊपरी रूहानी मंडलों में अपनी पहुंच बना लेता है जहां से केवल दया-मेहर की धाराएं ही मिलती हैं। यहां वह रूहानियत के रंग में पूरी तरह रंग जाता है। अब वह सांसारिक बुद्धिमान व्यक्ति नहीं रहता बल्कि रूहानियत से भर जाता है। वह एक ऐसी महान आत्मा बन जाता है जो केवल अपने गुरदेव के ख्यालों में लीन रहती है। इस तरह की अरदास को हम रूहानी अरदास भी कह सकते हैं। ऐसी अरदास में साधक को कुछ करने की जरूरत नहीं होती, सब कुछ सतिगुरु ही उसके लिए करता है।

चीटी की चिंघार पहले ही सुनीअतु हैं

ऊंची आवाज में की गई अरदासें कुछ समय के लिए मन को ऊपर की तरफ उठाती हैं तथा गंभीरता प्रदान करती हैं, लेकिन वास्तव में हम इन अरदासों में छुपे असल सत्य एवं महानता को समझ नहीं पाते, इसलिए ये हमारी आध्यात्मिक शक्ति को ऊंचा उठाने में सहायक नहीं होतीं। इसके विपरीत हम लोगों की प्रशंसा तथा शाबाशी में फंस जाते हैं। परिणामस्वरूप हम खुद को धोखा देते हैं, क्योंकि यह अरदास हमारी रूह की गहराइयों से नहीं होती। रूहानी उन्नति में सहायक नहीं होती। इनसे हमें कभी-कभी भौतिक आनंद एवं लहर का अनुभव होता है, लेकिन हमारी चेतना जागृत नहीं होती जो केवल आत्म-ज्ञान द्वारा ही हो सकती है। परमात्मा हमारी आत्माओं की आत्मा है। वह तो एक चींटी के चलने की आवाज भी सुन सकता है। वो हम सबकी जरूरतों, इससे पहले कि हमें उनकी जानकारी हो, का भली-भांति ज्ञाता है। शांतचित्त से ख्यालों में की अरदास ही फलीभूत होती है :

हमको अपने प्रभु को नम्रता सहित स्मरण करना है, शोर मचाने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि वह सब कुछ जानता है।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी फरमाते हैं :

हाथी की पुकार पल पाछै पहुचत ताहि चीटी की चिंघार पहले ही सुनीअतु हैं ॥४॥२५६॥

(कबित्त, अकाल उसतति)

अर्थात् वह चींटी के हृदय से निकली पुकार को हाथी की दहाड़ से भी पहले सुन लेता है। मनुष्य-मात्र को व्यक्तिगत अरदास में ऊंचा बोलने की आवश्यकता नहीं। उसके लिए तो केवल विचारों की धारा को ही बदलने की

आवश्यकता है। इसमें तो केवल मानसिक सिमरन-भाव (ख्यालों की भाषा) ही बहुत है।

प्रभु का पाना बहुत ही आसान है। इसके लिए तो केवल अपने कम को वाह्यमुखी ख्यालों से हटाकर अंतरमुखी बनाने की ही आवश्यकता है और ऐसे प्रभु के दर्शन हो जाते हैं। जो कि हमारी आत्मा की आत्मा है और हमारी असल जरूरतों को हमारे से ज्यादा समझती है।

हमें अति विनम्र भाव से समूह मानवता के भले के लिए अरदास करनी चाहिए जो कि सारी कायनात का विषय है तथा परमात्मा को बहुत प्यारा है। यह एक शक्तिशाली साधन है जो कौमों को मजबूत करने तथा समाजों को एकता के सूत्र में पिरोने का काम करता है :

"नानक नाम चढ़दी कला।
तेरे भाणे सरबत्त दा भला।"

सारी मानवता के लिए, सरबत्त के भले के लिए अरदासें करनी चाहिए।

इहु जगु सचै की है कोठड़ी

अरदास के लिए किसी विशेष स्थान की आवश्यता नहीं होती। यह शुद्ध हृदय में बहुत प्रफुल्लित होती है, इसलिए केवल ऐसी जगह की आवश्यकता है जो शांत हो। वास्तव में सारी दुनिया उसकी रचना है और इसलिए इसका इस्तेमाल अरदास के लिए कहीं भी किया जा सकता है :

इहु जगु सचै की है कोठड़ी सचे का विचि वासु ॥ (पन्ना ४६३)

अर्थात् सारा संसार प्रभु के रहने की जगह है और इसमें वह 'सच्चा' बसता है। वह जगह जहां बैठकर कोई अरदास करता है, पवित्र हो जाती है। सारी धरती पवित्र है, कहीं भी बैठ कर अरदास की जा सकती है :

हरि मंदरु एहु सरीरु है गिआनि रतनि परगटु होइ ॥ (पन्ना १३४६)

अर्थात् इंसानी शरीर ही हरि का सच्चा मंदिर (घर) है, जिसमें सच्चे ज्ञान का रत्न (कीमती हीरा) प्रकट होता है। परमात्मा की सच्ची आराधना शरीर के अंदर जाकर ही हो सकती है। सारी सुंदरता तथा प्रताप हमारे अंदर ही है। वह प्रीतम प्यारा तो हमारे अपने घर में है, लेकिन हम संसार में इधर-उधर मारे-मारे फिरते हैं। अमृत तो हमारे अंदर है, लेकिन हम प्यासे इधर-उधर घूम रहे हैं।

अब प्रश्न यह उठता है कि यदि परमात्मा हमारे अंदर ही है तो वह हमें दिखाई क्यों नहीं देता? इसके उत्तर में हम कह सकते हैं कि हमारी चमड़ी की आंखें केवल भौतिक वस्तुओं को ही देख सकती हैं। ये इतनी सूक्ष्म हैं कि ये परमात्मा के आध्यात्मिक प्रताप, जो अति सूक्ष्म है, को नहीं देख सकतीं। जब तक देखने वाली आंख की ताकत तथा वस्तु की बनावट का सुमेल न हो हम उस वस्तु को देख नहीं सकते। इसलिए केवल भीतरी आंख जब खुलती है वह प्रभु को देख सकती है :

नानक से अखड़ीआं बिअंनि जिनी डिसंदो मा पिरी ॥ (पन्ना ५७७)

अर्थात् हे नानक! वे आंखें और हैं जिनसे प्रभु का दीदार होता है।

परदा दूर करे आंखन का निज दरसन दिखलावे। (भक्त कबीर जी)

अर्थात् मेरी आंखों से परदा दूर करो और अपने दीदार कराओ। आगे फिर आता है :

एवडु ऊचा होवै कोइ ॥
तिसु ऊचे कउ जाणै सोइ ॥ (पन्ना ५)

अर्थात् उस परमात्मा जितना कोई ऊंचा हो तो ही उस ऊंचे को जान सकता है।

दस इंद्री करि राखै वासि ॥
ता कै आतमै होइ परगासु ॥ (पन्ना २३६)

अर्थात् शरीर की इंद्रियां जिसके वश में आ जाएं उसके अंदर ही प्रभु की ज्योति प्रकट होती है।

पानी और हवा प्रदूषित होने से बचायें!

*-स. दलबीर सिंघ**

अकाल पुरख परमात्मा ने भारत देश पर बहुत बख्शिश की है जो इसको कुदरती स्रोतों से मालामाल किया है। आज विज्ञान ने बहुत तरक्की कर ली है, फिर भी वह कुदरती स्रोतों का मुकाबला नहीं कर सकती, इसलिए हमें इन स्रोतों को संभालने के लिए हर वक्त तत्पर रहना चाहिए। हम सबका यही फर्ज बनता है कि कुदरती स्रोतों की संभाल करें और इनको प्रदूषित होने से बचायें।

हवा, पानी और धरती हमारी सृष्टि के तीन मुख्य अंग हैं। इनके बिना जिंदगी का चलना असंभव है और कई अन्य वस्तुएं भी कुदरत की देन हैं जो इस सृष्टि को चार चांद लगा रही हैं। उत्तरी जोन में हिमालय पर्वत, जो भारतीय समाज के लिए बहुत ही फायदेमंद साबित हुआ है। यह प्राकृतिक सीमा बनकर सुरक्षा का काम करता है। यह जड़ी-बूटियों का भंडार है जो दवाइयों के काम आती हैं। इसके अतिरिक्त लोहे, कोयले, सोने आदि की खानें भी भारत में मौजूद हैं। जल-स्रोत की महत्ता पावन गुरबाणी में भी दर्शाई गई है, जैसे कि:

--*पवणु गुरू पाणी पिता माता धरति महतु ॥* *(पन्ना ८)*

--*जल बिनु साख कुमलावती उपजहि नाही दाम ॥* *(पन्ना १३३)*

--*पहिला पाणी जीउ है जितु हरिआ सभु कोइ ॥* *(पन्ना ४७२)*

हवा को गुरु का, पानी को पिता का और धरती को माता का दर्जा देकर सत्कारा गया है।

धरती : श्री गुरु नानक देव जी ने धरती को 'मां' कह कर नवाजा है। मां कभी भी अपने बच्चों का बुरा नहीं सोचती, हमेशा प्यार की ही झड़ी लगाती है। अत: बच्चों का भी फर्ज बनता है कि वे अपनी मां की पूरी इज्जत करें। हमें धरती मां की सुंदरता को कायम रखना चाहिए, मौसम अनुसार पेड़-पौधे लगाने चाहिए ताकि धरती मां खुश रहे और मां के आंगन को मैला होने से बचाया जा सके।

जब हम कोई चीज खाते हैं तो प्राय: छिलका व लिफाफा धरती पर फेंकने से संकोच नहीं करते। यूं हम अपने पैरों के नीचे आप ही कांटे बो रहे हैं। हमारे द्वारा फेंकी वस्तु गल-सड़ कर बदबू मारती हैं और फिर यही बदबू भयानक से भयानक बीमारियों को जन्म देती है, जिससे सारा वातावरण पलीत हो जाता है। दुकानों के बाहर, पार्कों, बजारों आदि में योग्य जगह पर चीजें फेंकने के लिए टोकरियां या डिब्बे आदि रखने चाहिए।

पेड़ हमें आक्सीजन देते हैं और बदले में कार्बनडाईऑक्साईड लेते हैं। पेड़ हमारे असली दोस्त हैं। सरकार सरकारी नर्सीरियों से लोगों को पौधे प्रदान करे ताकि अधिक से अधिक पौधे लगाए जा सकें। इससे प्रदूषण कम होगा।

पानी : पानी एक अनमोल तोहफा है, जिसके सहारे सारी सृष्टि जीवित है। श्री गुरु नानक

४०२-ई, शहीद भगत सिंघ नगर, पक्खोवाल रोड, लुधियाना-१४१०१३, मो: ९४१७०-०१९८३

देव जी ने पानी को पिता का दर्जा दिया है। भगवान ने पंजाब को आब भाव कि दरिया बख्शे हैं, परंतु आज लोग इस दरियाओं की धरती पर ही पानी को तरस रहे हैं। आज धरती के नीचे का पानी और भी नीचे जा रहा है। एक रिपोर्ट के अनुसार जिला शहीद भगत सिंघ नगर (होशियारपुर) को छोड़ कर शेष सभी जिलों में पानी का स्तर गिर रहा है। पटियाला के पातड़ां उपक्षेत्र ने सभी रिकार्ड तोड़ दिए हैं। मोगा और संगरूर की स्थिति भी अति नाजुक है। जिला संगरूर में पिछले १० सालों में पानी का स्तर ०.८१ मीटर नीचे चला गया है। पंजाब खेतीबाड़ी यूनीवर्सिटी के वैज्ञानिकों ने खोज के दौरान यह बताया है कि एक किलो चावल पैदा करने के लिए ४००० लीटर पानी का प्रयोग होता है।

अगर पानी का यही हाल रहा तो कुछ ही वर्षों में पंजाब रेगिस्तान का रूप धार लेगा। पानी के लिए घर-घर झगड़े हो रहे हैं। सही कहा जा रहा है कि अब पानी की खातिर ही तीसरा विश्व युद्ध होगा। अत: पानी को बचाने के लिए आम लोगों में जागरूकता की लहर चलाई जानी चाहिए।

आज पानी की कमी क्यों?

-- पानी की ज्यादा बर्बादी होने के कारण ही आज हमें ये दिन देखने पड़ रहे हैं। देखने में आया है कि लोग टूटियां बंद नहीं करते और सरकारी टूटियां तो हमेशा खराब ही रहती हैं।

-- पानी का काफी हिस्सा आज दूषित हो गया है और बहुत सारे जीव-जंतु दूषित पानी की भेंट चढ़ गए हैं। इसके कई कारण हैं, जैसे कि कारखानों और सीवरेज का गंदा पानी नदियों में फेंकने से यह पानी दूषित हो जाता है।

-- समुद्रों और महासागर में तेल मिलने अथवा मिक्स होने के कारण पानी दूषित हो जाता है, जिसके फलस्वरूप जल के भीतर का जीवन बुरी तरह प्रभावित हो रहा है।

-- गेहूं-धान के फसली चक्कर के कारण भी धरती के नीचे का पानी और नीचे चला गया है, जिस कारण आज पानी की बहुत कमी महसूस हो रही है।

-- नदियों-नालों की संभाल अच्छी तरह नहीं हो रही है। रासायनिक पदार्थों के कारण भी पानी दूषित हो रहा है। यह जानलेवा बीमारियों का कारण बनते हैं।

पानी की बचत कैसे की जाए?

-- पानी को बचाने के लिए लोगों में जागरूकता की लहर स्कूलों, कॉलेजों, यूनीवर्सिटियों, धार्मिक स्थानों से चलाई जाए और यह भी बताया जाए कि पानी इस सृष्टि की जिंद-जान है।

-- कारखानों और सीवरेज का पानी नदियों-नालों में फेंकने से पहले इसे 'प्रदूषित-रहित' किया जाए।

-- आज फसली चक्कर से निकलने की जरूरत है और वो फसलें ज्यादा बोनी चाहिए जो पानी कम मांगती हैं, जैसे गन्ना, दालें आदि।

-- जैविक खेती या प्राकृतिक खेती अपनानी चाहिए, क्योंकि यह जहर-मुक्त है, जिसके फलस्वरूप पानी की काफी बचत हो जाती है। वे मनुष्य जो पानी को बचाने के लिए काम करते हैं, सरकार को उन्हें सम्मानित करना चाहिए। अत: हम सबको ही प्राकृतिक स्रोतों से प्यार करना चाहिए न कि खिलवाड़। यदि ऐसा हो जाए तो मौसम सुहावना बन सकता है, जो सारे चौगिरदे के लिए बहुत लाभदायक सिद्ध होगा।

हवा: श्री गुरु नानक देव जी ने हवा को 'गुरु' का दर्जा दिया है। हवा के कारण ही हम जीवित हैं। हमें ऐसे प्रदूषण को खत्म करना पड़ेगा जो

हवा को दूषित करता है।

कार या स्कूटर को समय से पहले स्टार्ट नहीं करना चाहिए। लोकल बसों और ऑटो रिक्शा में सी. एन. जी. इस्तेमाल करनी चाहिए, जैसे कि दिल्ली शहर में है और इसीलिए वहां अब प्रदूषण काफी सीमा तक कंट्रोल में है।

अत्यधिक शोरगुल भी एक हानिकारक प्रदूषण है। इसका संबंध कानों की बीमारियों ब्लड् प्रेशर, हाईपर टेंशन आदि से है। देखने में आया है कि शादियों और धार्मिक स्थानों पर लाऊड स्पीकर या डी. जे. काफी ऊंची आवाज में चलते हैं। छात्र वर्ग के लिए तो बहुत मुश्किल हो जाती है चूंकि जब परीक्षा का समय चल रहा होता है तो लाऊड स्पीकरों के शोर के कारण उनको कुछ भी याद नहीं होता।

विदेश में तो हार्न का प्रयोग अत्यंत संकोच से किया जाता है। सरकार प्रेशर हार्न बनाने वाली कंपनियों को दिशा-निर्देश दे कि ज्यादा ऊंची आवाज वाले हार्न बनाने बंद करें, नहीं तो कानूनी कारवाई होगी।

जहरीली दवाइयों का जो फसलों पर छिड़काव किया जाता है, उनका इस्तेमाल कम होना चाहिए। इन जहरीली गैसों के कारण ही ग्लोबल वातावरण गर्म हो रहा है जिसके फलस्वरूप मौसम में बहुत तबदीली आई है, जो पूरे ब्रह्मांड के लिए नुकसानदेय है।

वरमीकंपोस्ट और आरगैनिक कृषि पर 'भारतीय किसान जागृति शिक्षा संस्था' ने काम करना शुरू कर दिया है। इसके साथ ही धरती के नीचे वाला पानी दूषित नहीं होगा और ग्लोबल वातावरण का तापमान भी स्थिर रहेगा।

हम सभी का फर्ज बनता है कि प्राकृतिक स्रोतों की संभाल करें। हमें विश्व-प्रसिद्ध 'वातावरण-प्रेमी' बाबा बलबीर सिंघ सीचेवाल द्वारा बनायी राह पर चलना होगा, फिर ही हम जिंदगी में आ रही नई मुश्किलों पर काबू पा सकते हैं और जिंदगी में आनंद ले सकते हैं। ❀

बाबा बंदा सिंघ बहादर का बलिदान अद्वितीय

'गुरमति ज्ञान' का बाबा बंदा सिंघ बहादर विशेषांक बहुत प्रेरणादायक लगा। हमने सन् १९९५ में शांतिकुंज हरिद्वार से प्रकाशित बाबा बंदा सिंघ बहादर का एक गीत पढ़ा था। तब से हम बाबा बंदा सिंघ बहादर कौन है, इसका इतिहास पढ़ना चाहते थे। 'गुरमति ज्ञान' में उनका इतिहास पढ़कर बड़ा रोमांच हुआ। बाबा बंदा सिंघ बहादर ने कितने कष्ट सहकर देश-धर्म की रक्षा हेतु आत्म-बलिदान दिया! बाबा बंदा सिंघ बहादर को कोटिश नमन-वंदन।

-सुरेन्द्र कुमार अग्रवाल, हटा (दमोह)

हर अंक ज्ञान से ओत-प्रोत

मई २०१० का अंक प्राप्त हुआ, मन में अपार खुशी हुई। दो पुराने अंक दिसंबर एवं जनवरी के भी प्राप्त हुए। 'गुरमति ज्ञान' का हर अंक गुरु-भक्ति से परिपूर्ण एवं ज्ञान से ओत-प्रोत होता है। यह पत्रिका उत्तराखंड के जनपद ऊधम सिंघ नगर में भी अपनी पहचान अवसय बनायेगी।

-असित कुमार, नानकमत्ता साहिब।

हरेक काम को पूजा बनाओ

मूल लेखक : श्री टी. आर. शर्मा
अनुवादक : सुरिंदर सिंघ निमाणा

प्रत्येक काज, काम या कार्य जीवन का भाग है, भाग ही नहीं जीवन की शर्त है, आवश्यकता है, इसलिए काम को बहुत प्यार, धर्मनिष्ठता, लगन, प्रतिबद्धता और समर्पण के साथ करना चाहिए। विभिन्न संगठन अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए बहुत योग्य, अनुभवी, होनहार तथा कुशल कर्मियों का चयन करते हैं परंतु सभी कर्मी दिल-ओ-जान के साथ काम नहीं करते। यह बेरुखी की क्षति संगठन को तो होती है परंतु कर्मी को भी होती है। काम मनुष्य को संतुष्टि, आत्मबल और खुशी देता है। कामचोर इन सब दातों अथवा अमूल्य वस्तुओं से वंचित रहता है, उसका मानसिक संतुलन स्थिर नहीं रहता, साथी कर्मियों के साथ उसके संबंध दोस्ताना नहीं रहते, वह औरों की नजरों के अतिरिक्त अपनी तथा अपने परिवार की नजरों में भी गिर जाता है। धीरे-धीरे उसकी योग्यताएं अप्रयोग के कारण समाप्त हो जाती हैं तथा वह नकारा, सुस्त, अज्ञानी और अयोग्य व्यक्ति के तौर पर बदनाम हो जाता है। जो कार्यालय या दुकान के काम को अपना नहीं पराया समझ कर करते हैं या बिना काम किये श्रमफल या वेतन प्राप्त करते हैं वे चोर होते हैं। कुछ समय पाकर घर के काम के बारे में भी उनका ऐसा ही रवैया बन जाता है। उनमें सृजनात्मकता, नयी सोच, मौलिकता नाम की कोई चीज नहीं रहती। वे जीवन में कभी सफल नहीं होते।

काम औरों को खुश करने के लिए नहीं बल्कि अपनी खुशी के लिए, अपनी संतुष्टि के लिए, अपनी प्रवीणता तथा अपनी योग्यता को निखारने के लिए करना चाहिए। इसी को कर्म-योग कहा जाता है। काम में ही कर्मी को अपना भगवान नजर आना चाहिए, इसी लिए काम को पूजा या प्रार्थना कहा जाता है। कोई भी पूजा या अरदास धर्म परायणता या समर्पण के बिना परमात्मा को प्रवान नहीं होती:

खुदा मंजूर करता है दुआ जो दिल से होती है।
पर मुश्किल तो यह है कि वोह बड़ी मुश्किल से होती है।

इसी प्रकार कोई काम भी सुंदर, बढ़िया और संपूर्ण नहीं होता जब तक उसको पूजा जैसी पवित्रता, लगन और प्रेम के साथ न किया जाए। यह सही है कि कर्मियों को काम के परिणाम के तौर पर प्राप्त भौतिक लाभों के बारे में भी सोचना चाहिए और अच्छे वेतनों तथा सेवा-शर्तों के लिए जद्दोजहद करनी चाहिए, परंतु जो कर्मी केवल भौतिक लाभों के बारे ही सोचते हैं वे संस्था या संगठन पर बोझ बन जाते हैं; उनका अपना अस्तित्व ही मिट जाता है; उनका समूचा व्यक्तित्व एक पदार्थ बन जाता है; उनके सामाजिक, आध्यात्मिक और मानसिक पहलू सभी समाप्त हो जाते हैं। हमारी बहुत-सी मुलाजिम जत्थेबंदियां इसी आत्मिक गिरावट का ग्रास होकर रह गई हैं। यदि तनिक-सा भी अधिक काम करना पड़े उसका अलाऊंस मांगते हैं; एक दिन अधिक काम करना पड़ जाए तो उसके प्रतिफल के तौर पर छुट्टी

मांगते हैं। बढ़िया काम-सभ्याचार में ऐसी चीजें नहीं होतीं। हम काम का लुत्फ नहीं लेते। काम भी एक मजा है, खुशी है, इश्क है, जिसके हम न शौकीन हैं, न आदी हैं। छुट्टियां मांगना, काम को अरुचिकर रूप से निपटाना, कल पर इसको टालना या काम करने से इंकार करने के लिए बहानों की तलाश करना, काम के बदले में कुछ सुविधाएं, भत्ते या पुरस्कार मांगना हमारा स्वभाव बनता जा रहा है। काम सच में ही एक पूजा है, प्रार्थना है। इसको इसी रूप में लेना चाहिए।

('हस्सदे चिहरे' में से आभार सहित)

श्री हरिमंदर जी, पटना साहिब

गूंज रही है जिसकी बाणी
गुरु के घर में! इस परिसर में!
यहां आलौकिकता का है वास
कहते इसे 'तख्त हरिमंदर' हैं
जन्म-स्थल है 'दशम गुरु' का,
उस कलगीधर शहंशाह का,
'खालसा' उन्होंने नाम दिया,
जयकार हुआ 'वाहिगुरु का खालसा,
वाहिगुरु की फतह!'
श्रद्धा रखते हैं हम मन से!
लीला-भूमि है बचपन की,
जहां 'बाल लीला गुरुद्वारा' है,
'कंगन घाट' को भूलें कैसे
जिसके साथ जुड़ी स्मृतियां हैं!
'गुरु का बाग' में अब चलिये
पिता-पुत्र का प्रथम मिलन हुआ।
करके बहुबिध लीलाएं तब
पिता के साथ पंजाब गये।
कितनी स्मृतियां हैं कण-कण में!
इस पटना साहिब के रज-कण में!
गूंज रही है उनकी बाणी
'हरिमंदर' में, इस परिसर में।

-डॉ. दीनानाथ शरण, दरियापुर गोला, बांकीपुर, पटना साहिब (बिहार)-८०००४

वृक्ष-संस्कृति

वृक्ष हमारे पूज्य हैं
हमारे जीवन का आधार भी
वृक्ष-संस्कृति ही असली संस्कृति है
जीवन में विविध रंगों का
इन्द्रधनुष सजाते हैं वृक्ष
इन्हीं पर फली-फूली है
हमारी संस्कृति
इन्हीं पर खेले हैं
हमारे इष्ट भी
वृक्ष ही देते हैं
हमारे जीवन को भरपूरता
संस्कृति को अक्षुण्ण रखने को
हमें इन्हें बचाना होगा
और अंदर भी एक पेड़ उगाना होगा
उसे पोषित पल्लवित करना होगा
तभी वृक्ष-संस्कृति जीवित रहेगी
और हम भी।

-डॉ. प्रदीप शर्मा 'स्नेही', एस. ए जैन कॉलेज, अंबाला शहर (हरियाणा)।

श्रम का सम्मान, बढ़प्पन की पहचान

*-श्री प्रशांत अग्रवाल**

एक बार श्री गुरु नानक देव जी महाराज एक शहर में पधारे। तब भोजन के लिए दो लोगों ने गुरु जी को निमंत्रित किया। इनमें से एक था मलिक भागो, जो कि धनवान और साथ ही उच्च वर्ग का भी था। दूसरा था भाई लालो, जो एक गीरब व मेहनती काष्ठशिल्पी था। गुरु जी ने भाई लालो का निमंत्रण स्वीकार करके उसके यहां भोजन किया। जब मलिक भागो ने इसका कारण पूछा तो गुरु जी बोले, "तुमने अपनी सम्पत्ति गरीब और मेहनती लोगों का शोषण करके, उनका खून चूसकर प्राप्त की है, जबकि भाई लालो अपनी मेहनत की कमाई से सूखी खाता है। मेहनत से पैदा किए गए धन से तैयार भोजन में से अमृत-सा स्वाद आता है जबकि खुद मेहनत न करके धौखा, फरेब तथा बल-प्रयोग द्वारा अर्जित धन-पदार्थ से तैयार भोजन को खाना, गरीबों का खून पीने के समान है।

उक्त साखी से गुरु जी की श्रम के प्रति निष्ठा का परिचय मिलता है। वास्तव में यह दुनिया मेहनतकश लोगों के श्रमदान से ही चल रही है। हम जो भोजन करते हैं वह मेहनतकश किसान द्वारा धूप में कड़ी मेहनत करके ही उगाया जाता है। हम जिस घर में रहते हैं, उसे बनाने वाला भी मेहनतकश मिस्त्री ही होता है। हम जो कपड़ा पहनते हैं, उसको कारखानों में श्रमिक बन्धु ही तैयार करते हैं। हमारे गली-मोहल्लों को स्वच्छ बनाये रखने के लिए मेहनतकश सफाईकर्मी ही यह काम करते हैं। हमें एक जगह से दूसरी जगह ले जाने वाले रिक्शाचालक, ट्रक-बस-ट्रेन के चालक भी अपना पसीना बहाने वाले मेहनतकश ही होते हैं। किसान, गली-गली फेरी लगाकर सब्जी-फल बेचने वाले, घरों में झाडू-पोचा, चौका-बर्तन करने वाली कामवालियां, नाई, बढ़ई, लोहार, जिल्दसाज आदि जितने भी श्रम-केंद्रित मानव हैं, क्या इनमें से किसी एक के भी बिना हमारी समाज-व्यवस्था, हमारा जीवन सुचारू रूप से चल सकता है? और जो काम जीवन के लिए इतने अपरिहार्य हों, उनको करने वाले क्या हमारी श्रद्धा के पात्र नहीं होने चाहिए? लेकिन श्रद्धा तो दूर, हम समाज के इन आधार-स्तंभों की उपेक्षा करते हैं, उनकी मजबूरी का दोहन करते हैं, उनकी गरीबी से घिनियाते हैं, उनकी छोटी-सी गलती पर अबा-तबा बोलते हैं, गाली-गलौच की बौछार तक कर देते हैं; सिर्फ इस कारण कि वे बेचारे अपनी इस अवमानना का प्रतिकार करने में सक्षम नहीं होते? हम किसी का सम्मान करें या नहीं लेकिन किसी बेबस, लाचार के आत्मसम्मान को ठेस पहुंचाने का हमें कोई अधिकार नहीं है। दानिशमंदों का कथन है कि "दूसरों का अपमान करने से हमारा सम्मान भला कैसे बढ़ जाता है?" लेकिन ऐसे अनेक उदाहरण हैं, जहां श्रम का मान है। गुरुद्वारों में बड़े-बड़े धनी लोगों, प्रतिष्ठितों द्वारा कार-सेवा करना, लंगर में भोजन परोसना श्रम

**४०, बजरिया मोतीलाल, बरेली (उ. प्र.)-२४३००३, मो : ९४११६०७६७२*

के प्रति सम्मान की परंपरा का वर्तमान में उत्कृष्ट उदाहरण है जिससे ऊंच-नीच की द्वेषपरक भावना पर जोरदार प्रहार होता है।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी द्वारा मेहनत न करने वाले के हाथों से लाया हुआ पानी स्वीकार न करना, महाराजा रणजीत सिंघ द्वारा महाराजा होते हुए भी अनाज की बोरी पीठ पर ढोकर प्रजा के द्वार तक पहुंचाना, नेपोलियन द्वारा बोझ उठाकर ले जा रहे श्रमिक को रास्ता देना आदि अनेक उदाहरणों से सिद्ध होता है कि बड़े से बड़ा, महान और अहंकार रहित व्यक्ति हमेशा मेहनतकश के श्रम का सम्मान करता है तथा जो व्यक्ति पैसे और रुतबे के अहंकार में मेहनती गरीब लोगों का शोषण, अपमान और उपहास करता है, वह वास्तव में अपनी कुण्ठा, क्षुद्रता और तंगदिली का ही प्रमाण देता है। इसलिए बड़ा वो नहीं जो मजबूरों को सताये, जबरदस्ती उगराही करके अपना घर भरे तथा छीना-झपटी करके खाये, बल्कि वो है जो खुद मेहनत करके खाये, मजबूरों को अपनाये, मजबूत बनाये और गले लगाये। मलिक भागो जैसा दूसरे मनुष्यों को भोज इसलिए देता है ताकि वो अपनी सामार्थ्य आदि का प्रदर्शन कर गरीबों पर प्रभाव बना सके तथा भाई लालो जैसा मनुष्य दूसरों को इसलिए खिलाता है ताकि वो 'बांट कर छको' के सिद्धांत का पालन कर सके, सेवा कर गरीबों, जरूरतमंदों के जरिए प्रभु का आशीर्वाद प्राप्त कर सके और गुरबाणी के इस उपदेश को याद रखे :

घालि खाइ किछु हथहु देइ ॥
नानक राहु पछाणहि सेइ ॥ (पन्ना १२४५)

दूरदर्शिता अपनायें

महाराजा रणजीत सिंघ के दरबार में एक अंग्रेज व्यापारी ने कांच का कीमती सामान पेश किया। महाराजा ने उसे तुड़वाकर जब पुनः उसकी कीमत पूछी तो वह सामान मूल्यहीन हो चुका था। तब महाराजा ने अपनी पीतल की दवात को तुड़वाकर कबाड़ी के हाथ बिकवाया तो उस टूटी दवात का भी अच्छा-खासा मूल्य मिल गया। तब महाराजा ने अंग्रेज व्यापारी से कहा, "हमारे देश के लोगों को क्षणभंगुर चीजें नहीं बल्कि ऐसी चीजें चाहिए जो टूटने-फूटने पर भी काम आ सकें।"

इस प्रेरणादायी दृष्टिप्रदायक कथा में हमारी सभ्यता और उसके शासकों का दूरदर्शी जीवन-दर्शन निहित है। आज हम फैशन के चक्रव्यूह में फंसकर 'यूज एण्ड थ्रो' की सभ्यता अपना रहे हैं जो हमारी जेब, हमारे पर्यावरण और हमारी स्थिर मानसिकता को हानि पहुंचा रही है। शेक्सपिअर ने भी कहा है, "आदमी उतने कपड़े नहीं फाड़ता, जितने कपड़े फैशन फाड़ता है।" ऐसे में हमें अपनी अल्पदृष्टि वाली फैशनप्रस्त सोच में बदलाव लाने की आज प्रबल आवश्यकता है। प्लास्टिक के बने सामान का बढ़ता प्रचलन भी गैर-टिकाऊ एवं अदूरदर्शिता का परिचालक है जो हमारी जेब के साथ-साथ पर्यावरण पर भी भीषण दुष्प्रभाव डाल रहा है और अंततः ऐसी अस्थिर सभ्यता का अनुकरण करने से हमारी बुद्धि भी चंचल और अस्थिर बनने लगती है, उसमें स्थापित और सुदृढ़ता के तत्वों का ह्रास होता जाता है। अतः हमें अपने उपयोग की वस्तुओं में फैशन की बजाय स्थापित्व को महत्व देना चाहिए।

सेहत-संभाल

डिप्रेशन : कारण एवं निवारण

*-डॉ. शैलेष जैन (एम. डी.)**

कोई व्यक्ति तब तक स्वस्थ नहीं जब तक दोष : अग्नि, धातु एवं मल की क्रिया की समानता (प्राकृतावस्था) के साथ-साथ उस व्यक्ति की इन्द्रियों, उसके मन और और आत्मा में प्रसन्नता न हो। इस प्रकार स्वास्थ्य की सम्पूर्णता के लिए मानसिक स्वास्थ्य का समृद्ध होना आवश्यक तथा उपयोगी है।

रोगों के दो अधिष्ठान हैं :

१) शरीर २) मन

इन दोनों अधिष्ठानों में होने वाले शारीरिक और मानसिक रोग एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। कभी-कभी जब शरीर रोगी होता है तो मन भी रोगी हो जाता है तथा मन के रोगी होने पर शरीर को भी रोगाक्रांत होते देखा जाता है।

A normal person should not only be free of all psychotic, neurotic, psychosomatic and behavioural disturbances, but must also be subjectively comfortable, happy and free of disabling conflicts. He should be able to face the normal stresses and strains of everyday life in a realistic way, without getting distressed or disabled *(Clinical Diagnosis, 1977)*

मन के विकार से शरीर में विकार आता है। हृदय की गति, श्वास-प्रश्वास, आहार का पाचन आदि कार्य मन के प्रसन्न रहने पर ठीक हो पाते हैं। यदि अन्त:करण (मन) में वृद्धावस्था का भाव समा जाये तो जवानी में भी बुढ़ापा आ जाता है और यदि अस्सी वर्ष के वृद्ध का मन जवान होता है तो उसका शरीर युवावस्था की स्फूर्ति को धारण करता है :

जईफी जिंदगी में वक्त की बेजा खानी है।
अगर जिंदादिली है तो बुढ़ापा भी जवानी है।

यह बात अनुभवगम्य है कि मनुष्य जब अपने अंत:करण को उत्कृष्ट व पराक्रमशील समझता है तब शरीर में भी पौरुष और शक्ति का निवास होता है, इसलिए कहा जाता है कि:

मन के हारे हार है, मन के जीते जीत।

अधिक चिंता करने से शरीर और सिर में चक्कर आता है और विचार करने की शक्ति कुंठित होती है। अत्यंत क्रोध से पित्त का प्रकोप होकर ज्वर होता है। भय से पुरीषोत्सर्ग होता है, पेशाब आ जाता है और बदन से पसीना छूटने लगता है। इन स्थितियों से स्रोतों के मुख खुल जाते हैं और वे शीघ्रता तथा तीव्रता से कार्य करने लगते हैं। ईर्ष्या-द्वेष, लोभ, दैन्य, क्रोध तथा शोक आदि से मन के विकृत होने से पाचक रसों का उचित मात्रा से स्राव नहीं होता है और परिणामस्वरूप सुधा का ह्रास हो जाता है, जी मिचलाता है तथा वमन की प्रवृत्ति होती है। मन की विकृति का श्वास पर भी असर पड़ता है। किसी गंभीर रोग की विभीषिका से या दुखजनक हादसा देखने-सुनने से सहसा हृदय की धड़कन बंद हो जाती है। माता के क्रोध के आवेश से उसके बच्चे के लिए अमृत समान दूध सूख जाता है।

अवसाद का सामान्य अर्थ डिप्रेशन से है।

*"पुष्पदन्त निकुंज", ईश्वरीपुरा वार्ड, कटनी (म. प्र.)-४८३५०१। मो: ०९७४३२-८७६९५

निराशा, कुंठा, हताशा के कारण ही डिप्रेशन होता है। दैनिक जीवन में हमें नित्य नई समस्याओं का सामना करना पड़ता है। जब किसी समस्या का संतोषजनक हल हम नहीं खोज पाते हैं तो हमारे अंदर मानसिक तनाव उत्पन्न हो जाता है। कभी-कभी तो समस्या इतनी गंभीर हो जाती है कि व्यक्ति शक्तिहीनता का अनुभव करता है, किसी कार्य में उसका मन नहीं लगता, सदैव भयभीत-सा रहता है। जब यह भय किसी वस्तु के लिए केन्द्रित हो जाए तो उसे 'फोबिया' के नाम से जाना जाता है। उदाहरण के लिए ऊंची जगह का डर, बंद जगह का भय, दुख-बीमारी का डर, अंधेरे का डर व मृत्यु का डर आदि।

मानसिक तनाव भी तभी होता है जब हम किसी वस्तु को पाने में असमर्थ होते हैं। तनाव के कारण मानसिक, शारीरिक और आत्मिक होते हैं। प्रदूषण, शोरगुल, भीड़-भाड़, उद्वेग, क्रोध, भय, पौष्टिक भोजन का अभाव, धूम्रपान, नशीली वस्तुओं का सेवन, आर्थिक समस्या, असफलता, पारिवारिक झगड़े आदि अनेक कारण हैं जो तनाव बढ़ाते हैं। यह तनाव ही डिप्रेशन का कारण होता है। डिप्रेशन के कारण व्यक्ति में साधारण से लेकर गंभीर बीमारी तक घर कर लेती है।

डिप्रेशनग्रस्त व्यक्ति दुखी, उदास रहते हैं, उत्साहहीन होते हैं, निष्क्रिय रहने लगते हैं। इनकी सोचने, समझने, निर्णय लेने की क्षमता भी कम हो जाती है। मन की एकाग्रता समाप्त हो जाती है। व्यक्ति अपने को शक्तिहीन-सा अनुभव करता है। अधिकतर अवसादग्रस्त रोगियों को आरामप्रद गहरी नींद नहीं आती है, रात्रि को दो-तीन बजे ही खुल जाती है, सुबह सोकर उठने पर ताजगी महसूस नहीं करते। अवसाद के लक्षण अक्सर सुबह अधिक होते हैं और शाम को कम हो जाते हैं। डिप्रेशन से स्मरण-शक्ति भी कमजोर पड़ती है और शरीर में जकड़न-सी महसूस होती है। अवसादग्रस्त व्यक्ति नकारात्मक विचारों में खोया रहता है, हर बात में बुराई देखता है। उसे भूख कम लगती है, कब्ज हो जाती है, थोड़ा कार्य करने पर ही थकान अनुभव होती है। वे यह भी सोचने लगते हैं कि जीवन निरर्थक है तथा मन में आत्महत्या के भी विचार आने लगते हैं। रोग गंभीर होने पर कानों में विचित्र आवाजें सुनाई देने लग सकती हैं।

स्वभाव चिड़चिड़ा व क्रोधित हो जाता है। निरंतर अवसादग्रस्त रहने से डायबिटीज, थायरायड ग्रंथि का रोग, उच्च रक्तचाप व कैंसर जैसे असाध्य रोग हो जाते हैं। इसी कारण कभी-कभी व्यक्ति पर सनकपन भी सवार हो जाता है।

परिचय

अवसाद की अभिव्यक्ति आक्रांत व्यक्ति की आकृति से ही प्रकट हो जाती है। उसकी मुखाकृति, चेष्टा, भाषण और हाव-भाव से उसके मन का विषाद झलकने लगता है। उसका मुखमंडल कांतिहीन, उदास तथा पीताभ होता है और शरीर शिथिल होता है।

लक्षण

१) रोगी का चेहरा फीका, पीतवर्णी, निस्तेज और मुरझाया दीखता है।

२) किसी भी रोग से ग्रस्त व्यक्ति जब 'अवसाद' से पीड़ित हो जाता है तो उसका वह रोग बढ़ जाता है और दीर्घकाल तक बना रहता है।

३) रोगी भूत, भविष्य और वर्तमान इन तीनों कालों के दुखों का स्मरण करता रहता है और सदैव खिन्न रहता है।

४) उसे अपने प्रत्येक कार्य में असफलता ही दीख पड़ती है। वह निराशा के घेरे से बाहर

नहीं निकल पाता।
५) वह सदैव अपने पूर्व कर्त्तव्यों का लेखा-जोखा और जोड़-घटाओ करते-करते शरीर और मन दोनों से क्षीण हो जाता है। उसकी हर सोच में पछतावा और विषाद की चासनी ओत-प्रोत होती है।
६) उसे नींद कम आती है या नहीं भी आती। भोजन में रुचि नहीं होती और खाया हुआ भोजन ठीक से नहीं पचता तथा मलावरोध रहता है।
७) उसे कोई नया कार्य करने का उत्साह नहीं होता और दैनिक कार्य करने में भी रुचि नहीं होती, वह समाज से अलग रहना पसंद करता है, लोगों से मिलने-जुलने एवं बात करने से कतराता है।
८) उसे अपना जीवन व्यर्थ प्रतीत होता है। उदासीनता बढ़ जाने पर उसमें आत्महत्या की भावना उत्पन्न हो जाती है।
९) निराशा और असफलताजन्य क्षोभ की अधिकता होने पर उसे भूख नहीं लगती। वह खाने-पीने की परवाह नहीं करता। उसका मुंह सूखा रहता है, शरीर दुर्बल हो जाता है और वजन घट जाता है।
१०) दुर्बलता और चिंता बढ़ जाने पर वह किसी से बात करना पसंद नहीं करता। वह अकेला रहना चाहता है और उसकी गतिविधि मंद से मंदतर होती जाती है।
११) इस रोग का प्रभाव दिन में अधिक और रात में कम होता है। एक बार प्रकोप हो जाने पर इसका प्रभाव चार से छः महीने तक बना रहता है।
१२) रोगी किसी प्रकार का शारीरिक या मानसिक कार्य नहीं करना चाहता। वह हाथ-पैर हिलाने से जी चुराता है और विचारशून्य स्थिति में पड़ा रहता है। उसका मन अस्थिर रहता है। वह धीमी आवाज में रुक-रुक कर बोलता है।
१३) वह स्व-कपोलकल्पित आशंकाओं और चिंतन के जाल में फंसा रहता है, जिस प्रकार मकड़ी अपने द्वारा बुने जाल में फंस जाती है। वह निराशावादी, अकर्मण्य और आलसी एवं मन्दचेतन होता है।

डिप्रेशन से बचाव

तनाव को डिप्रेशन बनने से रोकना चाहिए। यदि आपको साधारण प्रकार का डिप्रेशन है तो पारिवारिक परिचर्या से भी दूर किया जा सकता है। यदि व्यक्ति को गंभीर रूप से डिप्रेशन है तो उसे किसी योग्य मानसिक रोग विशेषज्ञ से सलाह लेकर इलाज प्रारंभ करना चाहिए। डिप्रेशन के कारण का पता लगाकर उसके निवारण का उपाय किया जाना आवश्यक है।

डाक्टर डिप्रेशन को कम करने के लिए दवाइयां भी देते हैं पर वह स्थायी इलाज नहीं है। कई दवाइयों का प्रतिकूल प्रभाव भी पड़ता है। सभी रोगियों को दवा की आवश्यकता नहीं होती। नियमित रूप से डिप्रेशन की शिकायत स्वत: कम हो सकती है। डिप्रेशन को समाप्त करने के लिए निम्न उपाय हैं :
१) अपनी दैनिक दिनचर्या को नियमित बनायें।
२) यदि आप शारीरिक बीमारी का इलाज करा रहे हैं तो इलाज की समीक्षा कीजिए। आवश्यकता हो तो डाक्टर को बदलिए।
३) परिवार के कारण तनाव है तो तुरंत एक बार अस्थाई रूप से ही अन्यत्र कहीं जाकर राहत अनुभव करें।
४) आप अपनी क्षमता से आगे मत सोचिए, न कार्य करने का संकल्प करें।
५) नशीली वस्तुओं का सेवन बंद कर दीजिए।
६) अधिक एकांतप्रिय नहीं बनें, लोगों से मिलजुल कर रहें।

गुरबाणी चिंतनधारा : ४६

अनंदु साहिब

*-डॉ. मनजीत कौर**

ए मन पिआरिआ तू सदा सचु समाले ॥
एहु कुटंबु तू जि देखदा चलै नाही तेरै नाले ॥
साथि तेरै चलै नाही तिसु नालि किउ चितु लाईऐ ॥
ऐसा कंमु मूले न कीचै जितु अंति पछोताईऐ ॥
सतिगुरू का उपदेसु सुणि तू होवै तेरै नाले ॥
कहै नानकु मन पिआरे तू सदा सचु समाले ॥११॥

मन को प्रबोधित करते हुए इस पउड़ी में गुरु पातशाह उपदेश देते हैं कि हे प्यारे मन! अगर तू सदैव आत्मिक आनंद चाहता है तो सच्चे प्रभु को हमेशा अपने अंदर संभाल कर रख अर्थात् उस अकाल पुरख परमेश्वर को हृदय में सदैव याद रख, उस ईश्वर से चित्त जोड़ कर रख। हे भाई! यह परिवार जो तू देख रहा है इसने तेरा साथ नहीं निभाना। जिस परिवार ने तेरा साथ निभाना ही नहीं है उसके मोह-बंधन में क्यों फंसता है? वस्तुत: जो सदैव साथ निभाने वाले सम्बंधी या पदार्थ नहीं हैं उनमें चित्त नहीं जोड़ना चाहिए।

गुरु पातशाह पावन उपदेश देते हैं कि ऐसा काम भूल कर भी मत करना जिसके फलस्वरूप अंत में पछताना पड़े। हे भाई! सच्चे गुरु का उपदेश ध्यानपूर्वक सुन तथा उसके अनुरूप कार्य कर, वही सतिगुरु सदैव सर्वत्र तेरी सहायता करेगा। श्री गुरु अमरदास जी फरमान करते हैं कि हे प्यारे मन! अगर तू सच्चा आनंद चाहता है तो सदैव कायम रहने वाले परमेश्वर को हर पल अपने हृदय में संभाल कर रख, हर पल उस प्रभु को याद कर, क्योंकि इसी में ही वास्तविक आनंद निहित है।

उपरोक्त पउड़ी में जीवन में सदा कायम न रहने वाले सम्बंधों एवं पदार्थों से मुंह मोड़ कर सदा कायम रहने वाले ईश्वर के नाम के साथ सच्ची प्रीति जोड़ने की प्रेरणा दी गई है। प्रभु-नाम ही जीव का सच्चा साथी है जो लोक-परलोक में जीव का साथ निभाने वाला है। पंचम पातशाह की पावन बाणी में भी यही भाव दृढ़ करवाया गया है :

जह मात पिता सुत मीत न भाई ॥
मन ऊहा नामु तेरै संगि सहाई ॥ (पन्ना २६४)

नवम पातशाह श्री गुरु तेग बहादर जी की पावन बाणी भी जगत की झूठी प्रीति और स्वार्थी सम्बंधों के मोह को त्याग कर सच्चे परमेश्वर की बंदगी करने को प्रेरित करती है, यथा :

धनु दारा संपति सगल जिनि अपुनी करि मानि ॥
इन मै कछु संगी नही नानक साची जानि ॥
(पन्ना १४२६)

यही नहीं, गुरु पातशाह स्पष्ट करते हैं कि कलयुगी जीव इस भ्रम में न रहे कि कोई मेरा ईश्वर-नाम के बिना सच्चा साथी है। बाणी का फरमान है :

निज करि देखिओ जगतु मै को काहू को नाहि ॥
नानक थिरु हरि भगति है तिह राखो मन माहि ॥ (पन्ना १४२९)

सभी सुखों का दाता ईश्वर है तथा उसी के भजन से ही मुक्ति संभव है :

सभ सुख दाता रामु है दूसर नाहिन कोइ ॥
कहु नानक सुनि रे मना तिह सिमरत गति होइ ॥ (पन्ना १४२६)

**२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४ मो: ०९३१४६-०९२९३*

उपरोक्त पउड़ी में श्री गुरु अमरदास जी जीव को सुचेत करते हैं कि तू इस जगत में यह दुर्लभ मानव-जीवन पाकर भूल कर भी ऐसा काम मत करना जिससे परमेश्वर की दरगाह में जाकर तुझे पछताना पड़े, क्योंकि अवसर चूक जाने पर केवल जीव के पास पछतावा ही शेष रह जाता है, जैसे कि लोक-प्रसिद्ध उक्ति है "अब पछताए क्या होत जब चिड़िया चुग गई खेत?"

अगम अगोचरा तेरा अंतु न पाइआ ॥
अंतो न पाइआ किनै तेरा आपणा आपु तू जाणहे ॥
जीअ जंत सभि खेलु तेरा किआ को आखि वखाणए ॥
आखहि त वेखहि सभु तूहै जिनि जगतु उपाइआ ॥
कहै नानकु तू सदा अगंमु है तेरा अंतु न पाइआ ॥१२॥

गुरु पातशाह इस पउड़ी में अनंत प्रभु का गुणगान करते हुए फरमान करते हैं कि हे वाहिगुरु जी! तू अगंम है अर्थात् इन इंद्रियों की तेरे तक पहुंच नहीं है। अदृश्यमान शक्ति का भेद कोई नहीं पा सकता। तेरे अपार गुणों का कोई भेद नहीं पा सका। अपने वास्तविक स्वरूप को तू स्वयं ही जानता है और कोई भी तेरे गुणों का अंत नहीं पा सकता।

कोई जीव तेरा भेद पाने में कैसे सक्षम हो सकता है? यह रचना तो सारा तेरा ही रचा हुआ खेल है। प्रत्येक जीव में तू आप ही बोल रहा है, प्रत्येक जीव की सार-संभाल तू ही करता है जिसने इस दृश्यमान जगत की रचना की है। इन जीवों में विचरण करता हुआ प्रभु सब कुछ स्वयं ही देख रहा है।

श्री गुरु अमरदास जी फरमान करते हैं, हे प्रभु! तू सदैव मन-इंद्रियों की समझ से परे तथा पहुंच से दूर है, किसी ने भी तेरा अंत नहीं पाया।

वस्तुत: वह परमेश्वर अनंत है। उसका अंत कैसे पाया जा सकता है? गुरबाणी में अन्यत्र भी यही भाव लक्षित होता है :

पिता का जनमु कि जानै पूतु ॥ (पन्ना २८४)

पिता के जन्म के बारे में एक पुत्र क्या जान सकता है? उसे तो जैसा बताया जायेगा वो वही सत्य मान लेगा। ठीक वैसे ही सारी रचना उस पारब्रह्म परमेश्वर की है। वेद-शास्त्र, धर्म-ग्रंथ, ऋषि-मुनि, पीर-पैगंबर सब उसी की रचना हैं फिर उस रचियता का भेद कोई कैसे पा सकता है? गुरबाणी आशयानुसार, वह प्रभु जिसे जितना कहने की सामर्थ्य बख्शता है वह उतना ही कह सकता है। पूर्ण तौर से वह प्रभु स्वयं ही जान सकता है कि वह कितना बड़ा है और उसकी रचना का कितना विस्थार है, जैसा कि जपु जी साहिब में गुरु नानक साहिब जी का पावन फरमान है :

जा करता सिरठी कउ साजे आपे जाणै सोई ॥
किव करि आखा किव सालाही किउ वरनी किव जाणा ॥
नानक आखणि सभु को आखै इक दू इकु सिआणा ॥ (पन्ना ४)

उस परमेश्वर का अंत पाना किसी जीव के जीवन का मकसद नहीं है, लेकिन यह सर्वविदित है कि वह परमेश्वर प्रत्येक जीव में, प्रकृति के कण-कण में विद्यमान है। भक्त नामदेव जी की बाणी भी यही भाव दृढ़ करवाती है :

सभै घट रामु बोलै रामा बोलै ॥
राम बिना को बोलै रे ॥रहाउ॥
एकल माटी कुंजर चीटी भाजन है बहु नाना रे ॥
असथावर जंगम कीट पतंगम घटि घटि रामु समाना रे ॥ (पन्ना ९८८)

जर्रे-जर्रे में उस अकाल पुरख की विद्यमानता का बोध भी उसकी रहमत से होता है। उसकी कृपा से जीवन उसका गुणगान करते-करते उसी अनंत प्रभु में समा जाता है, उसी का ही रूप हो जाता है, जैसा कि गुरबाणी का पावन

फरमान है :

मेरा प्रभु निरमलु अगम अपारा ॥
बिनु तकड़ी तोलै संसारा ॥
गुरमुखि होवै सोई बूझै गुण कहि गुणी समावणिआ ॥ (पन्ना ११०)

सुरि नर मुनि जन अंम्रितु खोजदे सु अंम्रितु गुर ते पाइआ ॥
पाइआ अंम्रितु गुरि क्रिपा कीनी सचा मनि वसाइआ ॥
जीअ जंत सभि तुधु उपाए इकि वेखि परसणि आइआ ॥
लबु लोभु अंहकारु चूका सतिगुरू भला भाइआ ॥
कहै नानकु जिस नो आपि तुठा तिनि अंम्रितु गुर ते पाइआ ॥१३॥

अमरता को प्राप्त आत्मिक आनंद देने वाला अमृत रूपी नाम जिसकी खोज में देवते, ऋषि-मुनि निरंतर लगे रहते हैं, लेकिन यह अमृत पूर्ण नाम गुरु से ही प्राप्त होता है।

गुरु पातशाह फरमान करते हैं कि हे वाहिगुरु जी! जिस जीव पर आपने कृपा की उसी ने यह अमृत प्राप्त करके सदैव कायम रहने वाले प्रभु को अपने हृदय रूपी घर में बसाया है। ये समस्त जीव-जंतु तूने ही पैदा किये हैं। कोई विरला जीव ही तेरी रहमत से गुरु का दीदार करके तेरे चरणों में लगता है अर्थात् समस्त जीवों में तेरा ही रूप देखता है। ऐसे ही जीवों का प्रत्येक किस्म का लोभ, खान-पान एवं पदार्थों का लालच तथा अहंकार समाप्त हो जाता है। ऐसे ही जीव सतिगुरु को प्यारे लगते हैं।

तीसरे पातशाह फरमान करते हैं कि जिस मनुष्य पर प्रभु आप प्रसन्न होते हैं उन्हें ही आत्मिक आनंद देने वाला नाम-अमृत गुरु से प्राप्त होता है।

गुरबाणी आशयानुसार अमरता प्राप्त करने हेतु जिस अमृत की तलाश में ऋषि-मुनि तथा देवते सदैव लगे रहे वही अमृत प्रभु का सदा कायम रहने वाला नाम है, यथा :

अंम्रितु हरि हरि नामु है मेरी जिंदुड़ीए अंम्रितु गुरमति पाए राम ॥
हउमै माइआ बिखु है मेरी जिंदुड़ीए हरि अंम्रिति बिखु लहि जाए राम ॥ (पन्ना ५३८)

भगता की चाल निराली ॥
चाला निराली भगताह केरी बिखम मारगि चलणा ॥
लबु लोभु अहंकारु तजि त्रिसना बहुतु नाही बोलणा ॥
खंनिअहु तिखी वालहु निकी एतु मारगि जाणा ॥
गुर परसादी जिनी आपि तजिआ हरि वासना समाणी ॥
कहै नानकु चाल भगता जुगहु जुगु निराली ॥१४॥

प्रस्तुत पउड़ी में श्री गुरु अमरदास जी ईश्वर के भक्तों के व्यवहार की विलक्षणता बताते हुए स्पष्ट करते हैं कि जो जीव परमेश्वर से प्यार करते हैं उन भक्त-जनों की मर्यादा दूसरों से विलक्षण होती है अर्थात् उनकी जीवन-युक्ति दूसरे लोगों से अलग ही होती है।

भक्तों की चाल निराली होती है। वे मुश्किल रास्तों पर चलते हैं। ऐसे भक्त-जन खाने-पीने के चस्कों तथा पदार्थों के लालच, अहंकार, कर्त्ता-भाव, माया की तृष्णा त्याग देते हैं, कम बोलते हैं अर्थात् नेक काम करके भी मुंह से अपनी बढ़ाई नहीं करते।

इस मार्ग पर चलना कठिन साधना है। यह मार्ग खंडे की धार से तीखा तथा बाल से भी बारीक है अर्थात् इस मार्ग पर चलना खाला जी का घर अथवा आसान नहीं। इस मार्ग से विचलित होने की संभावना हर समय बनी रहती है, क्योंकि दुनियावी चाहते आध्यात्मिक पथ पर चलने में अनेक रुकावटें डालती हैं।

गुरु-कृपा से जिनका कर्त्ता-भाव मिट जाता है अर्थात् गुरु की कृपा-दृष्टि से जिनका

अहंकार खत्म हो जाता है, प्रभु-याद में जुड़ कर उनकी माया की कामना समाप्त हो जाती है।

गुरु पातशाह फरमान करते हैं कि भक्तों की जीवन-युक्ति अथवा जीने का ढंग संसारी लोगों से निराला ही होता है।

ईश्वर-प्रेम से जुड़े जीव 'भक्त' कहलाते हैं और उनकी जीवन जीने की शैली संसारी लोगों से सदैव अलग ही होती है, उनका व्यवहार निराला होता है, जैसा कि भक्त कबीर जी की बाणी भी इसी भाव को लक्षित करती है:

हरि के सेवक जो हरि भाए तिन्ह की कथा निरारी रे ॥ *(पन्ना ८५५)*

ऐसे भक्त-जन अल्पाहारी, नम्रता के धारणी, दया-क्षमा भाव से परिपूर्ण संतोषी स्वभाव के होते हैं तथा काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि विकारों से निर्लेप, सर्वत्र परमेश्वर का दीदार करने वाले, ईश्वरीय गुणों को अपनाकर उसी ईश्वर का ही रूप हो जाते हैं, यथा दशम पिता श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की पावन बाणी प्रकाश डालती है :

अलप अहार सुलप सी निंद्रा, दया छिमा तन प्रीति ॥
सील संतोख सदा निरबाहिबो, ह्वैबो त्रिगुण अतीत ॥
काम क्रोध हंकार लोभ हठ, मोह न मन सो लयावै ॥
तब ही आतम-तत को दरसै परम पुरुख कह पावै ॥ *(राग रामकली, पा: १०)*

जिउ तू चलाइहि तिव चलह सुआमी होरु किआ जाणा गुण तेरे ॥
जिव तू चलाइहि तिवै चलह जिना मारगि पावहे ॥
करि किरपा जिन नामि लाइहि सि हरि हरि सदा धिआवहे ॥
जिस नो कथा सुणाइहि आपणी सि गुरदुआरै सुखु पावहे ॥
कहै नानकु सचे साहिब जिउ भावै तिवै चलावहे ॥१५॥ *(पन्ना ९१९)*

उपरोक्त पउड़ी में श्री गुरु अमरदास जी उस परवरदिगार का शुक्राना करते हुए उसी की रजा (हुक्म) को शिरोधार्य करके पावन फरमान करते हैं कि हे वाहिगुरु! जैसे आप हम जीवों को जीवन सफर में अग्रसर करते हो अर्थात् समस्त जीवों को आप जिस ओर चलाते हो वे उसी ओर चलते हैं। (बस गुरु-कृपा से मुझे यही समझ आई है) तेरे (अनंत) गुणों का मैं भेद नहीं जानता। केवल मुझे यही समझ आई है कि जिस मार्ग पर तू हमें चलाता है, हम उसी मार्ग पर चलते हैं। जिन जीवों को आत्मिक आनंद के मार्ग पर आप चलाते हो उन पर रहमत करके अपने नाम में उनकी लिव जोड़ देते हो। ऐसे जीव सदैव हरि-नाम में लीन रहते हैं। जिन-जिन जीवों को अपनी सिफत-सलाह की बाणी श्रवण करने को प्रेरित करते हो वे मनुष्य गुरु के दर पर पहुंच कर आत्मिक आनंद की प्राप्ति करते हैं।

गुरदेव विनती करते हैं हे सदा कायम रहने वाले प्रभु! जैसे तुझे अच्छा लगता है वैसे ही तू हम जीवों को जीवन-मार्ग पर चलाता है।

वस्तुत: प्रभु आप ही समस्त गुणों का खजाना है। भक्तों में गुण प्रभु की ओर से ही आते हैं। समस्त जीवों की बागडोर उसी के हाथ में है अर्थात् सभी उसी बाजीगर के हाथों की कठपुतलियां हैं, जैसा वह नाच नचाता है जीव वैसा ही नाच रहे हैं अर्थात् जिस ओर जीवों को लगा कर जैसा कृत्य करवाता है जीव वही कुछ कर रहे हैं। जिन पर उसकी विशेष कृपा होती है उन्हें अपनी भक्ति के विलक्षण मार्ग पर स्वयं ही चलाता है। गुरबाणी में अन्यत्र भी प्रमाण है। वह समस्त गुणों का मालिक है, यथा:

सभि गुण तेरे मै नाही कोइ ॥
विणु गुण कीते भगति न होइ ॥ *(पन्ना ४)*

यही नहीं उन्हें स्वयं ही गुरु-दर की सूझ बख्श कर आत्मिक ज्ञान बख्शता है।

गुरबाणी राग परिचय : ३०

राग उपरांत बाणी - विविध सलोक

*-स. कुलदीप सिंघ**

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में ३१ रागों में बाणी के संपादन के अंत में शेष बाणी को तीन प्रमुख खंडों में बांटा गया है तथा प्रत्येक खंड के आरंभ में पूर्ण मूल-मंत्र *"ੴ सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥"* अंकित किया गया है।

१. विविध सलोक संचयन १३५३-१३८४
२. सवये १३८५-१४०९
३. सलोक वारां ते वधीक १४१०-१४३०

विविध सलोक संचयन के अन्तर्गत ३२ पन्नों में सलोकों की कई बाणियां हैं, जिसमें भाषा के विचार से विविध रूप हैं। संस्कृत रूप 'सहसक्रिती' है जिसमें श्री गुरु अरजन देव जी के ६७ सलोक हैं। संस्कृत का दूसरा रूप पाली भाषा का है जिसमें लिखे सलोक 'गाथा' कहलाते हैं। गाथाओं का प्रमाणिक ग्रंथ 'धमपद' है। श्री गुरु अरजन देव जी ने २४ गाथा छंदों में लोक प्रचलित पाली के रूप का प्रयोग किया। भाषा के अतिरिक्त छंद रचना में श्री गुरु अरजन देव जी के 'फुनहे' तथा 'चउबोले' विशेष बाणियां हैं। बाणीकारों की दृष्टि से भक्त कबीर जी और शेख फरीद जी के सलोक इस खंड के मुख्य भाग हैं। पंजाबी (गुरमुखी लिपि) भाषा में इस खंड की बाणियों की व्याख्या लगभग ३०० पन्नों में, भाई वीर सिंघ जी द्वारा संथिआ अनेक बाणियां भाग २ उपलब्ध है।

राग के अंतर्गत बाणी में सिरीरागु से पूर्व जपु जी तथा अन्य १४ चयनित शबद दिये गये हैं। रागों के समापन के बाद सलोक चयन के आरंभ में चार सलोक सहसक्रिती महला १ शीर्षक से हैं। इनका चयन राग आसा तथा राग माझ की वार से किया गया है। इनमें प्रथम सलोक श्री गुरु नानक देव जी (राग आसा, पन्ना ४७०) तथा अन्य तीन सलोक श्री गुरु अंगद देव जी (राग माझ, पन्ना १३८ तथा राग आसा, पन्ना ४६९) द्वारा रचित हैं।

श्री गुरु अरजन देव जी द्वारा संपादन का यह क्रम विशेष महत्वपूर्ण है। ये सलोक रागमयी बाणी के समापन में राग प्रभाती के अंतिम शबद *"तनि चंदनु मसतकि पाती"* के भावानुसार गुरमति साधना के निर्गुण तत्व का प्रतिपादन करते हैं :

--जिनि आतम ततु न चीन्हिआ ॥
सभ फोकट धरम अबीनिआ ॥
कहु बेणी गुरमुखि धिआवै ॥
बिनु सतिगुर बाट न पावै ॥
(पन्ना १३५१)

--जो जानसि ब्रहमं करमं ॥
सभ फोकट निसचै करमं ॥
कहु नानक निसचौ ध्यिावै ॥
बिनु सतिगुर बाट न पावै ॥ (पन्ना १३५३)

श्री गुरु अरजन देव जी के संस्कृत के सलोकों की भाषा सहज है। शबदों की वृत्ति से विषय प्रतिपादन प्रभावकारी है :

कतंच माता कतंच पिता कतंच बनिता बिनोद सुतह ॥
कतंच भ्रात मीत हित बंधव कतंच मोह कुटुंब्यते ॥
कतंच चपल मोहनी रूपं पेखंते तिआगं करोति ॥
रहंत संग भगवान सिमरण नानक लबध्यं अचुत तनह ॥ (पन्ना १३५३)

**सी-१२७, गुरु तेग बहादर नगर, इलाहाबाद-२११०१६*

इस सलोक में दुनियावी सम्बंधों की असारता के लिए कतम् शब्द का प्रयोग है। कौन मां है, कौन पिता है आदि के लिए कौन या किस प्रकार के लिए 'किस' शब्द प्रयोग होता है। अर्थ पर बल देने के लिए कतम् का प्रयोग है और कौन माता है, कौन पिता है कतम् + च (और) से 'कतंच' शबद सिद्ध होता है।

इसी शैली में सतसंग और प्रभु-कृपा के दुर्लभ होने का वर्णन है :

नच दुरलभं धनं रूपं नच दुरलभं स्वरग राजनह ॥
नच दुरलभं भोजनं बिंजनं नच दुरलभं स्वछ अंबरह ॥
नच दुरलभं सुत मित्र भ्रात बांधव नच दुरलभं बनिता बिलासह ॥
नच दुरलभं बिदिआ प्रबीणं नच दुरलभं चतुर चंचलह ॥
दुरलभं एक भगवान नामह नानक लबध्यिं साधसंगि क्रिपा प्रभं ॥ *(पन्ना १३५७)*

जिन चीजों की प्राप्ति संसार दुर्लभ मानता है वे दुर्लभ नहीं हैं, क्योंकि ये वस्तुएं पापी या पुण्य कर्म करने वाले सभी मनुष्यों को प्राप्त हो जाती हैं। अकाल पुरख प्रभु का नाम सबसे दुर्लभ है। 'नाम' एक लहलहाते वृक्ष के समान है जो हृदय-स्थल से प्रस्फुटित होता, बढ़ता है और फूल-फल का स्रोत बनता है। शरीर उसकी छाया में सुख प्राप्त करता है, मन शांत होता है और जीवात्मा आनंद में मग्न होती है।

श्री गुरु अरजन देव जी प्रभु-नाम-सिमरन सम्बंधी प्रार्थना करते हैं :

हे प्राण नाथ गोबिंदह क्रिपा निधान जगद गुरो ॥
हे संसार ताप हरणह करुणा मै सभ दुख हरो ॥
हे सरणि जोग दयालह दीना नाथ मया करो ॥
सरीर स्वसथ खीण समए सिमरंति नानक राम दामोदर माधवह ॥ *(पन्ना १३५८)*

संस्कृत में दो पंक्तियों का सलोक अनुष्टय कहलाता है, पाली में गाथा तथा हिंदी में दोहा। श्री गुरु अरजन देव जी के २४ गाथा छंद हैं। इनमें बोलचाल के शब्दों का समावेश हो गया है:

गाथा गूड़ अपारं समझणं बिरला जनह ॥
संसार काम तजणं नानक गोबिंद रमणं साध संगमह ॥ *(पन्ना १३६०)*

परमेश्वर-प्राप्ति की बात जानते तो सभी हैं किन्तु समझना कठिन है। अगर समझें तो कर्म क्यों उलटे हों? जो प्रभु को आत्मा से समझते हैं वे ज्ञानवान हैं। उनके कर्त्तव्य दिखाते हैं कि वे जो कुछ कहते हैं, करते हैं। सतसंग से परमेश्वर का नाम-सिमरन ही मुख्य कर्म है।

सहसक्रिती सलोक और गाथा के बाद श्री गुरु अरजन देव जी की बाणी फुनहे है। फुनहे चार चरणों का मात्रिक छंद है। प्रत्येक चरण (पंक्ति) में २१ मात्रा हैं तथा ११ मात्रा के बाद विराम है। फुनहे का काव्य शास्त्र में नाम अड़िल्ल है। चौथी पंक्ति में टेक के लिए छंदों की माला में एक ही शब्द का बार-बार प्रयोग होने से इस छंद को फुनहे की संज्ञा दी गई है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में २३ फुनहे हैं जिनमें 'हरिहां' शब्द का प्रयोग चौथी पंक्ति में है।

'फुनहे' के प्रथम छंद में मंगलाचरण है। फिर अकाल पुरख के लिए उत्कंठिता नारी के रूप में मिलन की अभिलाषा वर्णन है। गोपाल के साथ निवास करने से सभी रिद्धियां-सिद्धियां प्राप्त होती हैं।

जीव-स्त्री वर्षा ॠतु में प्रियतम को ढूंढ रही है। ऊपर आकाश शोभायमान है नीचे धरती। चारों ओर बिजली का प्रकाश मानो सज्जनों के चेहरों की तलाश कर रहा है। कोई बतावे, प्रियतम कहां मिल सकता है? (उत्तर) अगर मस्तक में भाग्य हो तो प्रभु के दरस में समा जाते हैं।

इसी संदर्भ में श्री हरिमंदर साहिब के

पावन स्थल का वर्णन है। मैंने प्रभु-मिलन हेतु सभी स्थान देखे हैं किन्तु श्री हरिमंदर साहिब के समान कोई स्थान नहीं है। इसे परमात्मा ने स्वयं बनाया है। गुरबाणी के आत्म-रस सरोवर में स्नान से सभी पाप दूर हो जाते हैं। अनुपम नगर 'रामदास पुर' की बस्ती सघन है:

डिठे सभे थाव नही तुधु जेहिआ ॥
बधोहु पुरखि बिधातै तां तू सोहिआ ॥
वसदी सघन अपार अनूप रामदास पुर ॥
हरिहां नानक कसमल जाहि नाइऐ रामदास सर ॥ *(पन्ना १३६२)*

'फुनहे' के चारों चरणों में समाप्त शैली में जीवात्मा के भावपूर्ण चित्रों का अंकन है। अपने सुंदरता के मद में कमल फूल सरोवर के कीचड़ में फंसा है। विस्मरण की उलझन में उसके पत्ते खिल रहे हैं। ऐसा कौन मित्र है जो इस कीचड़ के सम्बंध की विषम गांठ को तोड़ दे? (उत्तर) एक परमात्मा ऐसा है जो इस गांठ को तोड़कर अपने साथ जोड़ लेता है :

पंकज फाथे पंक महा मद गुंफिआ ॥
अंग संग उरझाइ बिसरते सुंफिआ ॥
है कोऊ ऐसा मीतु जि तोरै बिखम गांठि ॥
नानक इकु स्रीधर नाथु जि टूटे लेइ सांठि ॥१५॥
(पन्ना १३६२)

राग के उपरांत विविध सलोकों की कड़ी में अंतिम बाणी 'चउबोले' है जो चार फकीरों सम्मन, मूसन, पतंग और जमाल के प्रति उच्चारण किये गये। चउबोले ११ दोहों की माला है। 'चउबोले' के एक दोहे में कीचड़ को नम्रता का प्रतीक माना है जिससे कमल पैदा होता है।

'चउबोलों' की परंपरा का अध्ययन खोज का विषय है। चउबोलों में विषय का प्रस्तुतीकरण नवीन शैली में है। उस प्रियतम का मुख चन्द्रमा के सामन है, नयन कमल के समान है जो काले अंजन से मन को मोह रहे हैं। हे मूसन! उस प्रियतम के भेद में मैं मग्न हो रहा हूं। ऐसी मग्नता है कि अगर कोई शरीर के टुकड़े-टुकड़े भी कर देगा तो मुझे उसका ज्ञान भी नहीं होगा :

कमल नैन अंजन सिआम चंद्र बदन चित चार ॥
मूसन मगन मरंम सिउ खंड खंड करि हार ॥
(पन्ना १३६४)

राग उपरांत बाणी के प्रथम खंड में श्री गुरु अरजन देव जी के 'सलोक', 'गाथा', 'फुनहे' और 'चउबोले' के बाद भक्त कबीर जी के 'सलोक' अंकित हैं। निर्गुण भक्ति के क्षेत्र में भक्त कबीर जी की पहचान भारतीय तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर बन चुकी है। भक्त कबीर जी की आयु १२० वर्ष के लगभग माने जाने पर उनका जन्म श्री गुरु नानक देव जी से ७१ वर्ष पूर्व हुआ था। उनकी बाणी का मौखिक रूप उत्तर भारत में प्रचलित था। उसी का प्रमाणिक रूप श्री गुरु ग्रंथ साहिब में मिलता है। भक्त कबीर जी के शबदों को रागों में विभक्त किया गया है, किन्तु सलोकों को मुख्यत: एक ही क्रम में अंकित किया गया है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में भक्त कबीर जी के आध्यात्मिक दोहों अथवा सलोकों को सहज रूप में प्रस्तुत किया गया है। नाम-साधना में भक्त कबीर जी ने हरि के नाम को हीरा, मोती और अमूल्य पदार्थ कहा है :

--राम पदारथु पाइ कै कबीरा गांठि न खोल्ह ॥
नही पटणु नही पारखू नही गाहकु नही मोलु ॥
(पन्ना १३६५)

--मारगि मोती बीथरे अंधा निकसिओ आइ ॥
जोति बिना जगदीस की जगतु उलंघे जाइ ॥
(पन्ना १३७०)

--कबीरा एकु अचंभउ देखिओ हीरा हाट बिकाइ ॥
बनजनहारे बाहरा कउडी बदलै जाइ ॥
(पन्ना १३७२)

--कबीर जैसी उपजी पेड ते जउ तैसी निबहै ओड़ि ॥

हीरा किस का बापुरा पुजहि न रतन करोड़ि ॥
(पन्ना १३७२)

उक्त चार सलोकों में राम-नाम (प्रभु-नाम) के चार रहस्य बताए गए हैं। 'राम' के पदार्थ को छिपा कर रखना है, 'राम' के मोती की परख अंतरदृष्टि से होती है जिसके बिना आदमी अंधा है। 'राम' के 'नाम' की बेकदरी आज के जीवन का यथार्थ है तथा राम-नाम की तुलना किसी भौतिक वस्तु (करोड़ों) रत्नों से नहीं हो सकती।

भक्त कबीर जी के सलोकों में गुरबाणी-चिंतन के अनुरूप प्रभु के प्रति आस्था और निष्ठा व्यक्त की गई है। भक्त कबीर जी के सलोकों से चयनित चार सलोकों को श्री गुरु नानक देव जी के सलोकों से मिलाकर पढ़ने से भावों की एकरूपता का ज्ञात होता है। भक्त कबीर जी की अभिव्यक्ति सुधक्कड़ी कहलाती है। श्री गुरु नानक देव जी की अभिव्यक्ति कोमल और करुणाद्र है :

कबीर फल लागे फलनि पाकनि लागे आंब ॥
जाइ पहूचहि खसम कउ जउ बीचि न खाही कांब ॥ *(पन्ना १३७१)*

जीवन के सामान्य कर्मो से उनके परिणाम दिखाई देते हैं तथा ऐसा मालूम होता है कि कर्मो के फल हमें प्राप्त होंगे। कर्मों के नियंता का स्तर हमसे ऊंचा है। विद्रूप से नियति उपभोक्ता और फल के बीच का सम्बंध बिगाड़ देती है और फल अहंकारयुक्त कर्त्ता को नहीं मिलता:

--नानक माइआ करम बिरखु फल अंम्रित फल विसु ॥
सभ कारण करता करे जिसु खवाले तिसु ॥
(पन्ना १२९०)

--कोई वाहे को लुणै को पाए खलिहानि ॥
नानक एव न जापई कोई खाइ निदानि ॥
(पन्ना ८५४)

श्री गुरु नानक देव जी कहते हैं कि माया कर्मों का पेड़ मात्र है जिसमें दुख रूपी अमृत और विष के फल लगे हैं। भगवान स्वयं कारण बन कर जिसको जो भी फल खिलाता है, वो खाता है। कोई हल चलाता है, कोई फसल काटता है, कोई उसे खलिहान में एकत्र करता है। यह नहीं जाना जा सकता कि अंततः उसे कौन खायेगा।

कर्मों का फल निश्चित नहीं है, इसलिए गर्व करते हुए गरीबों की हंसी मत उड़ाओ। प्रभु ही एक मात्र कारण है। राम (प्रभु) की सहायता के बिना सभी उपाय पंगु हैं :

--कबीर गरबु न कीजीऐ रंकु न हसीऐ कोइ ॥
अजहु सु नाउ समुंद्र महि किआ जानउ किआ होइ ॥ *(पन्ना १३६६)*

--कबीर कारनु सो भइओ जो कीनो करतारि ॥
तिसु बिनु दूसरु को नही एकै सिरजनहारु ॥
(पन्ना १३७१)

--कबीर कारनु बपुरा किआ करै जउ रामु न करै सहाइ ॥
जिह जिह डाली पगु धरउ सोई मुरि मुरि जाइ ॥ *(पन्ना १३६९)*

वास्तव में कर्म-फल-प्राप्ति प्रभु की इच्छा पर निर्भर है :

--किआ हंसु किआ बगुला जा कउ नदरि करेइ ॥
जो तिसु भावै नानका कागहु हंसु करेइ ॥
(पन्ना ९१)

--मति पंखेरू किरतु साथि कब उतम कब नीच ॥
कब चंदनि कब अकि डालि कब उची परीति ॥
नानक हुकमि चलाईऐ साहिब लगी रीति ॥
(पन्ना १४७-४८)

भक्त कबीर जी के द्वारा प्रभु की सहायता के बिना निराशा का चित्र प्रस्तुत किया गया था। श्री गुरु नानक देव जी प्रभु की नदरि में विश्वास करते हुए कहते हैं कि प्रभु अपनी रजा से अयोग्य (काग) को भी हंस बना देता है और

फल-प्राप्ति में सहायक होता है।

भक्त कबीर जी के कथन के अनुसार प्रत्येक डाल मुड़-मुड़ जाती है पर गुरु नानक साहिब जी का कथन है कि हमारे बुद्धि रूपी पक्षी को कर्म रूप पंख मिले हुए हैं। कभी वह चंदन की ऊंची डाली पर बैठता है, कभी आक की कड़वी डाली पर; कभी उसकी परमेश्वर से प्रीति भी हो जाती है। जीव परमेश्वर के हुक्म के अनुसार चलाए जाते हैं। यही रीति आदि काल से चली आती है।

रागों के बाद बाणी के प्रथम खंड के अंतिम भाग में भक्त कबीर जी के सलोकों के बाद 'सलोक फरीद के' अंकित हैं। शेख फरीद जी ने मानव-जीवन में व्यवहार कैसा करना चाहिए, इस सम्बंध में सद्व्यवहार को दृढ़ किया है।

हे फरीद! जो तुझे मुक्कों से मारते हैं उनकी प्रतिक्रिया (बदले) में उन पर प्रहार मत कर, उनके पैर चूम कर अपने घर जा :

फरीदा जो तै मारनि मुकीआं तिन्हा न मारे घुंमि ॥
आपनड़ै घरि जाईऐ पैर तिन्हा दे चुंमि ॥

(पन्ना १३७८)

सद्व्यवहार उत्तम फल देने वाला है। अशुभ कर्मों से मधुर फल नहीं होगा।

हे फरीद! जिस प्रकार कोई कृषक बबूल का कांटेदार बीज बोकर बिजौर क्षेत्र के अंगूर की कामना करे अथवा कोई खुरदरी ऊन कात कर कोमल रेशमी वस्त्र पहनना चाहे, वैसे ही निष्ठुर व्यवहार से स्नेहपूर्ण व्यवहार की आशा करना है :

फरीदा लोड़ै दाख बिजउरीआं किकरि बीजै जटु ॥
हंढै उंन कताइदा पैधा लोड़ै पटु ॥ (पन्ना १३७९)

अवगुणपूर्ण कर्मों से प्रभु के दरबार में शर्मिंदा होना पड़ता है, इसलिए परोपकार के कार्य करने चाहिएं :

फरीदा जिन्ही कंमी नाहि गुण ते कंमड़े विसारि ॥
मतु सरमिंदा थीवही सांई दै दरबारि ॥

(पन्ना १३८१)

बुरे कर्मों के बदले में क्रोध करने से शरीर में रोग लगता है। बुरे के बदले भले कर्म से सभी कार्य सिद्ध होते हैं :

फरीदा बुरे दा भला करि गुसा मनि न हढाइ ॥
देही रोगु न लगई पलै सभु किछु पाइ ॥

(पन्ना १३८२)

मानव-मात्र के प्रति सद्व्यवहार प्रभु की आराधना है। निष्कर्ष रूप में अंकित सलोक शेख फरीद जी के मुलतान क्षेत्र की ठेठ भाषा में एक सोरठे के रूप में हैं। हे साधक! क्या तेरे मन में प्रिय से मिलने की लालसा है? तो यह अच्छी तरह समझ ले कि सभी प्राणियों के मन में माणिक्य (रत्न स्वरूप) प्रभु विराज रहा है। उस रत्न को हल्की चोट देना भी अच्छा नहीं है, इसलिए किसी के हृदय को न गिरा :

सभना मन माणिक ठाहणु मूलि मचांगवा ॥
जे तउ पिरीआ दी सिक हिआउ न ठाहे कही दा ॥ *(पन्ना १३८४)*

साधना के क्षेत्र में शेख फरीद जी और भक्त कबीर जी के सलोकों का अंतर-सम्बंध रेखांकित किया जा सकता है।

हे जिज्ञासु! पूर्ण परमात्मा रूपी गुरु की तलाश कर जहां से कुछ प्राप्त हो। पाखंडी गुरु से क्या मिलेगा? कीचड़ से हाथ भर जायेगा:

फरीदा सोई सरवरु ढूढि लहु जिथहु लभी वथु ॥
छपड़ि ढूढै किआ होवै चिकड़ि डुबै हथु ॥

(पन्ना १३८०)

भक्त कबीर जी अन्योक्ति अलंकार के माध्यम से समझाते हैं कि अविद्या रूपी पोखर (छोटे तालाब) में पानी थोड़ा है। इसमें काल ने जाल फैलाया हुआ है। हे मछली! यहां तुम बच नहीं पाओगी, इसलिए परमात्मा-समुद्र को संभालो, इसकी ओट लो :

कबीर थोरै जलि माछुली झीवरि मेलिओ जालु ॥
इह टोघनै न छूटसहि फिरि करि समुंदु सम्हालि ॥ (पन्ना १३६७)

संसार-सरोवर का एक चित्ताकर्षक रूप भी है, जिसमें जीव-रूपी पक्षी साधना के मार्ग पर अकेला है, किन्तु उसको लुभाने वाले विषय-विकार बड़ी संख्या (पचास) में हैं। जीव विषय की लहरों के भंवर में फंस गया है। एक सच्चे प्रभु की ही आशा है :

सरवर पंखी हेकड़ो फाहीवाल पचास ॥
इहु तनु लहरी गडु थिआ सचे तेरी आस ॥
(पन्ना १३८४)

भक्त कबीर जी ने जीव की तुलना हिरन से की है जो दुर्बल है और तालाब के आस-पास विषयों की हरियाली में मग्न है। अकेले जीव को मारने वाले शिकारी लाखों हैं। वह काल-बंधन से कैसे छूटेगा?

कबीर हरना दूबला इहु हरीआरा तालु ॥
लाख अहेरी एकु जीअ केता बंचउ कालु ॥
(पन्ना १३६७)

परमात्मा के प्रति एकनिष्ठ प्रेम और साधना के मार्ग की कठिनाई का सहर्ष स्वीकार शेख फरीद जी की भक्ति का आधार है। विघ्नों को पार करते हुए प्रभु से मिलन शेख फरीद जी का इष्ट है :

फरीदा गलीए चिकड़ु दूरि घरु नालि पिआरे नेहु ॥
चला त भिजै कंबली रहां त तुटै नेहु ॥
भिजउ सिजउ कंबली अलह वरसउ मेहु ॥
जाइ मिला तिना सजणा तुटउ नाही नेहु ॥
(पन्ना १३७९)

वह कौन-सा शब्द है जिसके पुकारने से प्रभु वश में होता है? वह शब्द है 'नम्रता'। वह कौन-सा गुण है जिसको कमाने से प्रभु की कृपा होती है? वह गुण है 'क्षमा'। वह कौन-सा मंत्र है जिसे जिह्वा पर धारण करने से प्रियतम का प्रेम मिलता है? वह मंत्र है 'मधुर वचन'।

निवणु सु अखरु खवणु गुणु जिहबा मणीआ मंतु ॥
ए त्रै भैणे वेस करि तां वसि आवी कंतु ॥
(पन्ना १३८४)

उपहार ऐसा जो जीवन भर याद रहे

यह बात हर एक आम व खास व्यक्ति के मन को कचोटती रहती है कि वो अपने मित्रों, सम्बंधियों को यदि उपहार दे तो क्या दे? किसी के जन्म-दिन आदि या किसी विशेष दिवस पर किसी को कुछ भेंट किया जाए तो ऐसा उपहार हो जिसे स्वीकार करने वाला जिंदगी भर याद रखे। इसके लिए अब ज्यादा सोचने और चिंता की जरूरत नहीं है। जीवन भर का उपहार है 'गुरमति ज्ञान'। उपहार भी ऐसा कि जब हर माह मित्र आदि के घर पर जाकर डाकिया 'गुरमति ज्ञान' की प्रति थमाएगा तो आपका मित्र हर माह आपका शुक्रिया करता नहीं थकेगा। आप अपने मित्र या किसी सम्बंधी को केवल १००/- रुपये में उपहारस्वरूप 'गुरमति ज्ञान' का आजीवन सदस्य बना दीजिए और हासिल कीजिए अपने मित्र की जीवन भर की खुशियां। यह सौदा बेहद सस्ता एवं लाभकारी रहेगा। आज ही मनीआर्डर या बैंकड्राफ्ट के जरिए चंदा भेजकर अपने मित्र या सम्बंधी को 'गुरमति ज्ञान' का आजीवन सदस्य बनाकर उसे इस बहुमूल्य 'उपहार' से निवाजें। *-संपादक।*

गुरु-गाथा : २२

खालसे की माता, माता साहिब कौर

*-डॉ. अमृत कौर**

रोहतास का रामू बस्सी खत्री और उसकी पत्नी जसदेवी को जब अनेकों वर्षों तक संतान सुख प्राप्त न हुआ, तो गुरु-घर अरदास करने से उनके घर में एक कन्या ने जन्म लिया। साहिब (गुरु-घर) से प्राप्त आशीर्वाद समझ कर उसका नाम रखा गया 'साहिबा', साहिब द्वारा बख्शिश किया गया वरदान। उन्होंने संकल्प किया कि इसका डोला भी गुरु-घर में ही भेंट किया जाएगा। बाद में उनके घर एक पुत्र ने जन्म लिया। उसका नाम रखा गया साहिब राय।

साहिबा को गुरु-घर की अमानत समझ कर उसके पालन-पोषण में प्यार और श्रद्धा का सम्मिश्रण था। बचपन से ही उसे गुरमुखी की शिक्षा, गुरबाणी और गुरु-इतिहास का बोध कराया गया। अपने सुरीले मधुर कंठ से जब वह संगत में गुरबाणी का पाठ करती तो स्रोते आनंदित हो उठते। उसका अधिकांश समय संगत-पंगत की सेवा में व्यतीत होता। वह अपने माता-पिता और संगत की आंखों का तारा थी, विनम्रता, मिठास, सेवा, संतोष की साकार प्रतिमा थी।

जब साहिबा विवाह योग्य आयु की हुई तो उसके माता-पिता उसकी शादी के लिए रिश्ता लेकर अनंदपुर साहिब पहुंचे और गुरु जी से साहिबा का रिश्ता स्वीकार करने की प्रार्थना की। साहिबा के माता-पिता का कहना था, "हमने तो साहिबा को जन्मते ही आपको समर्पित कर दिया था। अब इसकी शादी कहीं और नहीं कर सकते और न ही कोई और इससे शादी करेगा। सब इसको 'माता' कह कर बुलाते हैं। साहिबा मन ही मन आपको पति रूप में स्वीकार कर चुकी है।"

गुरु जी असमंजस में पड़ गए। आपने कहा कि "हम अब अपना सम्पूर्ण समय और शक्ति देश, धर्म की सेवा में लगाना चाहते हैं। अब हमारा एकही लक्ष्य है जुल्म और अत्याचार का नाश कर जालिमों व अत्याचारियों का सर्वनाश करना। हां, यदि आपकी बेटी भी देश-धर्म की सेवा के लिए तैयार है तो हम यह रिश्ता स्वीकार कर सकते हैं।"

साहिबा को सम्पूर्ण स्थिति से अवगत कराया गया। वह कहने लगी, "मैंने तो प्रण किया हुआ है कि मैं गुरु जी के अतिरिक्त और किसी से विवाह नहीं करूंगी। मैं मन ही मन उनको अपना जीवन-साथी मान चुकी हूं। मैं अपने माता-पिता के प्रण को अवश्य निभाऊंगी। मेरा उनके साथ मानसिक, आत्मिक संयोग तो होगा। उनके चरणों में जीवन अर्पित कर मेरा जीवन धन्य हो जाएगा। उनके साथ रहने का सौभाग्य दुर्लभ आत्मिक आनंद होगा?" और इस प्रकार उनका गुरु जी से विवाह सम्पन्न हुआ।

शौर्य, सुंदरता व कला की साकार प्रतिमा शहंशाहों के शहंशाह को जीवन-साथी के रूप में पाकर साहिबा के पांव पृथ्वी पर न टिकते थे। उनके होंठ बाणी का पाठ गुनगुनाते रहते। मुख पर दैवी मुस्कान खिली रहती। हाथ संगत और माता गुजरी जी की सेवा में संलग्न रहते। माता गुजरी जी को उनसे अपार स्नेह था। माता सुंदरी जी का वह बड़ी बहन की तरह

१५४, ट्रिब्यून कॉलोनी, बलटाना, जीरकपुर-१४०६०३ (पंजाब)

सत्कार करतीं और बच्चों के पालन-पोषण में उनका हाथ बंटातीं।

साहिबा अपने हाथों से चक्की पीस कर बाणी का पाठ करते हुए उस आटे से गुरु जी के लिए खाना बनाती। अपने हाथों से दही, लस्सी, मक्खन बनाती, पंखा झुलाते हुए बड़े चाव से उन्हें खाना खिलाती और बाद में स्वयं खातीं। उनका गुरु जी के दर्शन कर खाना खाने का संकल्प अनंदपुर साहिब का किला छोड़ने तक निभता रहा।

मां बन कर सम्पूर्ण बनने की कामना तो नारी मन की एक स्वाभाविक इच्छा है। एक दिन गुरु जी को खाना खिलाते समय साहिबा की आंखें छलक पड़ीं। गुरु जी ने देखा तो पूछा, "साहिबा, रो क्यों रही हो?" क्या मैं सदैव संतान-प्राप्ति के सौभाग्य से वंचित ही रहूंगी?" गुरु जी ने कहा, "साहिबा! इस सांसारिक कामना की पूर्ति के लिए तुम्हें थोड़ा समय और प्रतीक्षा करनी होगी।"

वैसाखी का त्यौहार आया। गुरु-परंपरा के अनुसार दरबार सजा और गुरु जी ने इस अवसर पर खालसा पंथ के निर्माण के लिए नीयत योजना के तहत अमृत-पान की तैयारी शुरू करवाई। साहिबा ने भी खालसे की वीरता में मधुरता का संचार करने के लिए अमृत में बतासे डाले। अमृत-पान कराते समय गुरु जी ने ऐलान किया, "आज से खालसे की माता 'साहिब कौर' होंगी। मैं खालसे को साहिब कौर की झोली में डालता हूं। सम्पूर्ण खालसा अनंदपुर साहिब का वासी होगा और मेरा ही रूप होगा।" 'सति श्री अकाल' के जैकारों से आकाश गूंज उठा। गुरु जी ने कहा, "देखो तुम्हें एक नहीं सैकड़ों पुत्रों-पुत्रियों की माता होने का सौभाग्य प्राप्त हो रहा है।" आज भी खालसे को अमृत-पान कराते समय यही बताया जाता है कि उनकी माता साहिब कौर जी और पिता श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी हैं।

साहिबे-कमाल गुरु जी द्वारा प्रदत्त 'संतान' को प्राप्त कर माता साहिब कौर धन्य हो गईं। एक महान औरत इतने बड़े खालसे की मां बन गई थीं। अपनी इस नव-प्राप्त 'संतान' की सेवा में वे दिन-रात संलग्न रहतीं। उन्हें इतना बड़ा परिवार मिल गया था। सैंकड़ों शस्त्रधारी बलवान सैनिकों की वे मां थीं। वे ममता लुटातीं, उन पर वारे-सदके जाती, माता साहिब कौर बन गईं। संसार में खालसे की माता होने का सौभाग्य प्राप्त करने वाली माता साहिब कौर अपना उदाहरण स्वयं ही हैं।

Quantity की जगह Quality पर ज्यादा ध्यान दिया जाए!

'गुरमति ज्ञान' की लोकप्रियता का निरंतर बढ़ रहा ग्राफ 'गुरमति ज्ञान' के लेखक भाइयों-बहिनों के परिश्रम का ही फल है। हम अपने कुछ लेखक भाइयों-बहिनों से एक छोटी-सी विनती करते हैं कि वे अपनी रचनाओं में नवीनता का तत्व न गायब होने दें। तथ्यों पर आधारित, मौलिक तथा अप्रकाशित रचनाएं पत्रिका के विकास का 'इंजन' हुआ करती हैं तथा समाज में नई चेतना पैदा करती हैं। पूर्व प्रकाशित किसी रचना को ही सामने रखकर नई रचना लिख देना केवल पाठकों को ही निराश नहीं करता बल्कि ऐसा करने से तो पाठक वर्ग के मन-मस्तिष्क में उस लेखक के प्रति सम्मान की न्यूनता भी होने लगती है। कृप्या मात्रा (Quantity) की जगह गुणों (Quality) पर ज्यादा ध्यान दिया जाए। *-संपादक।*

दशमेश पिता के ५२ दरबारी कवि-३५

बेदावा फड़वाकर मुक्त होने वाले कवि भाई महां सिंह

*-डॉ राजेंद्र सिंह 'साहिल'**

भाई महां सिंह का दशमेश पिता के दरबारी कवियों में एक विशेष स्थान है। भाई महां सिंह उन चालीस सिक्खों में से एक थे जो अनंदपुर साहिब के घेरे के समय दिसंबर सन् १७०४ ई में श्री गुरु गोबिंद सिंह जी को 'बेदावा' लिख कर दे आये थे और गुरु जी से नाता तोड़कर घर को लौट गये थे। बाद में माता भागो जी की प्रेरणा से इन सबका विवेक जागा और ये पुनः गुरु-कार्य में आ डटे। ये सभी चालीस सिक्ख भाई महां सिंह के नेतृत्व में शत्रु से जंग करते हुए 'खिदराणे की ढाब' (वर्तमान मुक्तसर) नामक स्थान पर शहीद हुए और 'चालीस मुक्ते' कहलाये।

भाई महां सिंह का सम्बंध भाई मनी सिंह जी के गुरु-भक्त खानदान से था। छठम पातशाह साहिब श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के परम सिक्ख भाई बल्लू इनके परदादा और भाई माई दास इनके दादा थे। भाई मनी सिंह इनके सगे चाचा थे। इनके पिता भाई राय सिंह थे। मुक्तसर में शहीद होने वाले 'चालीस मुक्तों' में इनके पिता भाई राय सिंह भी शामिल थे।

भाई महां सिंह का जन्म लाहौर के निकट स्थित एक गांव 'मरल माड़ी' में हुआ था। बड़े होकर ये अनंदपुर साहिब आ गये और गुरु-घर की सेवा करने लगे। भाई महां सिंह को लिखने-पढ़ने और हिसाब-किताब रखने की सेवा दी गई थी।

भाई महां सिंह एक उच्च कोटि के कवि भी थे। अब इनका एक-मात्र छंद प्राप्त होता है, परंतु इनके एक छंद से ही साबित हो जाता है कि इनका व्यक्तित्व कितना भावुक, कितना संवेदनशील और कितना आध्यात्मिक था :

सिआम बिन ऊधौ! ऐसी भई,
जिउं मछली बिन पाणी।
तत्ते रेते पई तड़फां, बेदन किसै न जाणी।
कुट्ठी दरद फिराकत वाली, देही दरद रंजाणी।
महां सिंघ साडा जीवन तांही, मिलसी सारंगपाणी।

छंद से स्पष्ट है कि कवि भाई महां सिंह पंजाबी-फारसी भाषा और अलंकार-रस-छंद आदि के अच्छे ज्ञाता थे।

भाई महां सिंह के जीवन का सबसे बड़ा कारनामा 'खिदराणे की जंग' में शहादत प्राप्त करना है। 'बेदावा' लिखकर दशमेश पिता का साथ छोड़ आने वाले सिंह जब घरों में पहुंचे तो उनकी सिंघनियों ने उन्हें लाखों लानतें-मलामतें दीं और खुद गुरु जी का साथ देने की तैयारियां करने लगीं। माता भागो जी इसमें सबसे पेश-पेश थीं। यह देखकर सभी सिंह बेहद शर्मिंदा हुए। इन्होंने गुरु जी से क्षमा मांगने और पुनः युद्ध में शामिल होने का निश्चय किया।

माता भागो जी तथा भाई महां सिंह के नेतृत्व में यह जत्था दक्षिण की ओर बढ़ रहे दशमेश पिता की सेवा में पहुंचने के लिए निकल पड़ा। 'खिदराणे की ढाब' नामक स्थान पर जत्थे का सामना सूबेदार वजीर खां के लश्कर से हो गया। घमासान युद्ध हुआ। कई-कई वैरियों को धराशायी करते-करते चालीस में से

**१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा (लुधियाना), पंजाब। मो: ०९४१७२-७६२७१*

३७ सिंघ शहीद हो गये।

जब दशमेश पिता वहां पहुंचे तो भाई महां सिंघ, पिता राय सिंघ एवं भाई सुंदर सिंघ झल्लियां में कुछ सांसें बाकी थीं। आपने दशमेश पिता से 'बेदावा' फाड़ने की विनती की। गुरु जी ने 'बेदावा' फाड़ दिया। तीमारदारी के बावजूद तीनों सिंघ दम तोड़ गये। सबसे अंत में भाई महां सिंघ ने चलाणा किया। दशमेश पिता सारी रात भाई महां सिंघ का सिर गोद में रखकर बैठे रहे। इस प्रकार कवि भाई महां सिंघ को बेदावा फड़वाकर मुक्त होने वाले शहीद का श्रेय मिला।

कविताएं

चलते रहना धर्म हमारा

चलते रहना धर्म हमारा, है नदिया के संग।
रुकने से जीवन रुक जाये,
करे व्यवस्था भंग।
'चल-चल' कहती चलते-चलते,
नदिया से जल धारा।
जंगल का मंगल करना है,
भरना सागर खारा।
सागर को जा नभ पर बनना,
सुधा बिंदु का अंग।
चलते रहना धर्म हमारा . . .।
सुधा बिंदु को चढ़ अंबर पर,
जग का ताप मिटाना।
सुप्त शिराओं को भरकर फिर,
पर्वत को हरियाना।
हरियाली में भरना फिर से,
भांति-भांति के रंग।
चलते रहना धर्म हमारा . . .।
भांति-भांति के रंगों से फिर,
जग में अन्न उगाना।
पशुओं को चारा देना है, हर पंछी को दाना।
फिर-फिर जनजीवन में भरना,
नित्य नई उमंग।
चलते रहना धर्म हमारा . . .।

-'भुजंग' राधेश्याम सेन, बड़े शिव मंदिर के पीछे, मंगलीपेठ, सिवनी (म. प्र.)-४८०६६१

अभिवादन

भोर! तुम्हारा अभिवादन है,
क्योंकि तुम्हारा आगमन
उल्लास का उद्‌गम है।
तुम्हारे आने से
नीरसता हो जाती है उड़न छू
अवसाद दूर तक दिखाई नहीं देता
चेतना को, मिलते हैं नवप्राण
हृदय का पंछी करने लगता है कलख
उड़ने लगता है भावनाओं के विस्तृत आकाश में
मन के वृक्ष पर खिल उठते हैं
उत्साह के सुरभित कुसुम
दृष्टव्य होता है गंतव्य का पथ स्पष्ट
जिस पर अग्रसर है जीवन द्रुतगति से।
रात! तुम्हारा भी इस्तकबाल,
इसलिए कि तुम्हारी दस्तक पर
दिन भर की थकान, कह देती है अलविदा
तुम्हीं देती हो व्यस्ततम दिन को
अपनी समीक्षा व अपने मूल्यांकन का
अवसर भरपूर
और आने वाले दिन को
सुनहरे सपने उगाने के लिए उर्वर जमीन।

*-श्री हेमंत गुप्ता 'पंकज', **KRW**-२३, जलदाय विभाग कॉलोनी, प्रताप नगर, दादाबाड़ी, कोटा (राजस्थान)-३२४००९*

ख़बरनामा

माओट रायल यूनीवर्सिटी कैलगरी (कनाडा) में सिक्ख मिशन स्थापित किया जाएगा : अध्यक्ष

श्री अनंदपुर साहिब। विद्या के क्षेत्र में शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी द्वारा सिक्खी के प्रचार तथा प्रसार के अलावा जहां पंजाब एवं देश के अलग-अलग राज्यों में विद्यक संस्थाएं स्थापित करने के नए कीर्तिमान स्थापित किए हैं वहां अलग-अलग देशों की विद्यक संस्थाओं के साथ गठजोड़ भी किये हैं। विदेशों में सिक्खी के प्रचार व प्रसार के लिए तथा गैरसिक्खों को सिक्ख धर्म, इतिहास, सिद्धांत तथा दर्शन सम्बंधी माओट रायल यूनीवर्सिटी कैलगरी (कनाडा) में सिक्ख स्टडीज सेंटर स्थापित करने के फैसले को स्वीकृति दी गई है। इन विचारों का प्रगटावा शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने किया।

उन्होंने बताया कि यह समझौता गत दिवस शिरोमणि कमेटी के कैलगरी विधान सभा क्षेत्र के विधायक एवं राज्य सरकार के मंत्री स. मनमीत सिंघ (भुल्लर) के सहयोग से माओट रायल यूनीवर्सिटी के प्रेजीडेंट तथा डीन साहिबान से हुई विचार के बाद किया गया।

गुरबाणी तथा इतिहास के प्रति भ्रम-भुलेखे पैदा करने वाले पंथ-दोखियों से सुचेत रहो : सिंघ साहिब

श्री अमृतसर। मीरी-पीरी के मालिक छठे पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी द्वारा सृजित श्री अकाल तख्त साहिब गुरु साहिब के आदेशों के अनुसार गुरु-घर के निष्ठावान सेवक बाबा बुड्ढा जी तथा भाई गुरदास जी ने अपने हाथों से सेवा करके तैयार किया था जिसका प्रत्येक सिक्ख के हृदय में विशेष स्थान है और जो सिक्ख प्रभु-सत्ता का केंद्र भी है। समूह सिक्ख जगत श्री अकाल तख्त साहिब को समर्पित है और इस पावन स्थान से समय-समय जारी हुए आदेश, संदेश तथा हुकमनामों को हर सिक्ख मन, वचन तथा कर्म करके प्रवान करता है। यह तख्त सदीवी है। इन विचारों का प्रगटावा श्री अकाल तख्त साहिब के जत्थेदार सिंघ साहिब ज्ञानी गुरबचन सिंघ ने श्री अकाल तख्त साहिब के सृजना दिवस को समर्पित श्री अकाल तख्त साहिब में सजे दीवान के समय एकत्र संगत को सम्बोधित करते हुए प्रकट किया।

उन्होंने कहा कि सांसारिक तख्त बनते तथा ढहते रहते हैं, मगर श्री अकाल तख्त साहिब सदा कायम रहने वाला है। उन्होंने कहा कि श्री अकाल तख्त साहिब से हमेशा सच की आवाज बुलंद हुई है। आज कुछ लोग पंथ-दोखियों के इशारों पर गुरबाणी तथा इतिहास पर किंतु करके पंथ में भेदभाव करने की कोशिश कर रहे हैं। उनसे सुचेत रहते हुए सतिगुरु द्वारा बख्शे सिक्खी सिद्धांतों पर पहरा देने की आवश्यकता है। सृजना दिवस के मौके पर उन्होंने संगत को बाणी तथा बाणे के धारक होने की प्रेरणा दी। इससे पहले सचखंड श्री हरिमंदर साहिब के हजूरी रागी भाई बलदेव सिंघ के जत्थे ने अलाही बाणी का कीर्तन किया। अरदास श्री हरिमंदर साहिब के अरदासीए भाई धरम सिंघ ने की।

इस अवसर पर श्री हरिमंदर साहिब के मुख्य ग्रंथी सिंघ साहिब ज्ञानी जसविंदर सिंघ,

ग्रंथी सिंघ साहिब ज्ञानी मल्ल सिंघ तथा सिंघ साहिब ज्ञानी जगतार सिंघ के अलावा शिरोमणि कमेटी का समूचा स्टाफ उपस्थित था।

शिरोमणि कमेटी द्वारा बाढ़ पीड़ितों के लिए लंगर की सेवा शुरू

श्री अमृतसर। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के सविच स. जोगिंदर सिंघ ने बताया कि पंजाब तथा हरियाणा के कुछ इलाकों में भारी बारिश के कारण आई बाढ़ से प्रभावित परिवारों के पास लंगर पहुंचाने के लिए शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ द्वारा मिले आदेश के अनुसार बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों के निकट लगते गुरुद्वारा माछीवाड़ा, गुरुद्वारा देगसर साहिब कटाणा, गुरुद्वारा दूख निवारण साहिब (पटियाला), गुरुद्वारा साहिब पातशाही नौवीं बहादरगढ़ (पटियाला), गुरुद्वारा मंजी साहिब अंबाला, गुरुद्वारा साहिब पातशाही अठवीं पंजोखरा, गुरुद्वारा नाढा साहिब पंचकूला तथा गुरुद्वारा श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी कपाल मोचन के प्रबंधक अपने कर्मचारियों सहित सहायता कार्यों में जुट गए हैं। स. जोगिंदर सिंघ ने बताया कि बाढ़ प्रभावित लोगों की मदद के लिए सहायता (लंगर) कार्यों के लिए सेवा का मुख्य केन्द्र गुरुद्वारा दूख निवारण साहिब, पटियाला में स्थापित किया गया है।

सिक्ख रेफ्रेंस लायब्रेरी को पुनः स्थापित करने में भारी सफलता मिली

श्री अमृतसर। जून १९८४ के घल्लूघारे के दौरान भारतीय फौज 'सिक्ख रेफ्रेंस लायब्रेरी' का अनमोल खजाना उठा कर ले गई थी। केंद्र सरकार को बार-बार पत्र लिखने के बावजूद भी सरकार ने सिक्ख कौम का यह बहुमूल्य खजाना वापिस नहीं किया। लायब्रेरी को पुनः पहले जैसे रूप में स्थापित करने के लिए शिरोमणि गु: प्र: कमेटी के अधिकारियों को जहां से भी हस्तलिखित प्राचीन गुरमति साहित्य का पता चलता है वे वहां खुद पहुंचकर उसे प्राप्त करते हैं। यह जानकारी देते हुए शिरोमणि गु: प्र: कमेटी के सचिव स. दलमेघ सिंघ ने बताया कि समूह सिक्ख जगत को विनती की गई थी कि जिस भी किसी सज्जन या संस्था आदि के पास कोई भी दुर्लभ ऐतिहासिक हस्तलिखित ग्रंथ, पुस्तक या सिक्ख इतिहास से सम्बंधित कोई अन्य प्राचीन वस्तु हो वो सिक्ख रेफ्रेंस लायब्रेरी, श्री अमृतसर में भेटा सहित या भेटा रहित देने के लिए सम्पर्क करे ताकि उन वस्तुओं आदि की सेवा-संभाल सुनियोजित ढंग से की जा सके। उन्होंने बताया कि लायब्रेरी में वे सभी अत्याधुनिक मशीनें लगाई गई हैं जो पुराने से पुराने ग्रंथ, पुस्तक आदि को भी कीड़े, दीमक आदि से बचाए रखती हैं। उन्होंने आगे बताया कि इस कार्य में बड़ी सफलता तब मिली जब बाबा नरिंदर सिंघ (जिला लुधियाना) के आग्रह पर उनसे लगभग श्री गुरु ग्रंथ साहिब ३० के हस्तलिखित पावन स्वरूप तथा २९ अन्य हस्तलिखित पोथियां प्राप्त कर पूर्ण गुरु-मर्यादा अनुसार लायब्रेरी में रखी गई हैं। शिरोमणि गु: प्र: कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने बाबा नरिंदर सिंघ का धन्यवाद करते हुए अन्य संगत से दुर्लभ ग्रंथों एवं वस्तुओं को लायब्रेरी में पहुंचाने के लिए अपील की।

मुद्रक एवं प्रकाशक स. दलमेघ सिंघ ने गोल्डन आफसेट प्रेस, गुरुद्वारा रामसर साहिब, श्री अमृतसर से छपवा कर मालिक शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के लिए कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर से प्रकाशित किया। संपादक स. सिमरजीत सिंघ। प्रकाशित करने की तिथि : ०१-०८-२०१०